श्रीवीतरागाय नमः

दम्पतिसुखसाधन

प्रथमभाग

जिसको

संभल-ग्रामनिवासी फूलचन्द्रात्मज

स्वरूपचन्द्र सेठीने

बनाया.

वही

सर्व साधारणके हितार्थ

मुम्बयीस्थ

जैनहितैषी पुस्तकालयने

मुम्बईके "कर्नाटक प्रेसमें" छपाकर

प्रसिद्ध किया.

सन १९०१ ई.

पुस्तक नं. ६.

प्रथमवार ३०० प्रति.]

[मूल्य ३ आने.

प्रस्तावना.

वर्त्तमानसमयमें विद्योन्नतिके प्रभावसे अनेकानेक आवश्यकीय विषयोंकी उन्नति होने लगी परन्तु विचार करके देखा जाता है तो **दाम्पत्यसुखकी** (स्त्रीपुरुषोंके गार्हस्थ्यसुखकी) दिनोदिन अवनति ही दृष्टिगोचर होती है. सो इसी सुखकी उन्नतिका उपाय करनेकी तरफ ध्यान खींचनेकेलिये यह **दम्पतिसुख-साधन** नामकी पुस्तक लिखी गई है. और आजकल पाश्चात्य विद्याके प्रभावसे हमारे नवयुवक बाबूगण बहुतसी पुरानी चालों को पसन्द नहिं करते. इसकारण नयी रीतियोंका अवलम्बन करके नईरोशनीवाले बाबूलोगोंके मनोऽनुकूल करनेमें भी परिश्रम किया गया है. परन्तु इसमें कहांतक कृतकार्य हुआ है. सो पाठक महाशय ही विचार सकते हैं. इसके पढ़नेसे यदि एक भी **दम्पती**का हितसाधन हुआ तो मैं अपने परिश्रमको सफल समझूंगा.

मुरादाबाद

कार्तिक कृष्ण ११ संवत् १९५५ वि.

सर्वसाधारणका हितैषी

स्वरूपचन्द सेठी.

पुस्तक मिलनेका ठिकाना—

पन्नालाल जैन मालिक—

जैनहितैषी पुस्तकालयः

पो० गिरगांव मुम्बई.

श्रीवीतरागायनमः

दम्पतिसुखसाधन.

(प्रथम भाग.)

सोरठा.

शशिसमश्वेत ' स्वरूप, चन्द्र ' चरण चहकर कृपा ॥
लिखूं सकल हित रूप, दम्पतिसुखसाधन प्रथम ॥ १ ॥

विशेष कर्तव्य.

(१)

मनुष्योंके जन्मभरमें जितने कार्य्य हैं; उनमेंसे विवाह करना सर्वापेक्षा मुख्य समझा जाता है. कारण समस्त सांसारिक सुख प्रायः इस विवाहसे ही सम्बन्ध रखते हैं. विवाहसे कुटुम्बकी सृष्टि होती है, समस्त कुटुंब मिलकर रहनेमें सुख तथा दुःख भी अनेक हैं. परन्तु विवाह करके किस उपायसे सुखी हो सकते हैं, यह ही इस पुस्तकके लिखनेका मुख्य अभिप्राय है.

समाजमें विवाह-विधि प्रचलित होनेसे अनेक लाभ हैं और विवाह होनेपर कोई किसीका त्याग नहिं कर सकता. यह रीति और भी अतिशय लाभदायक है. इसकारण पति पत्नी हमेशह सुखसे कालव्यतीत करते रहें; इस विषयमें दोनोंको ही विशेषतया उपाय करनेकी अत्यन्त आवश्यकता है जिनको इस उद्देश्यके साधन करनेकी इच्छा होय तो सबसे पहिले पतिको स्त्रीका स्वभाव व रुचि भले-प्रकार जान लेना चाहिये. और स्त्रीको भी पतिके स्वभाव व रुचिको विशेषतया जान लेना चाहिये. क्योंकि एक दूसरेके स्वभावको न जाननेसे अनेक दम्पती (पति और पत्नी) हमेशहकेलिये दुःखमें ही कालव्यतीत कर रहे हैं. हमारे प्रत्यक्ष देखनेमें आता है कि—अनेक पुरुष गुणवती रूपवती और विद्यावती पत्नीको पाकर भी सुखी नहिं होते. और अनेक, रूपवान् गुणवान् विद्वान् पति भी स्त्रीको सुखी करनेमें असमर्थ होते हैं; सो परस्परके स्वभावको न जानना ही इस चिरदुःखका मूलकारण है.

बहुधा देखनेमें आता है कि पति, स्त्रीकी अपेक्षा बुद्धिमान् और विद्वान् होता है, परन्तु इस अवस्थामें स्त्रीको कुछ भी न समझ हताश नहिं होना चाहिये,

किन्तु स्त्रीके मनोऽनुकूल चलकर उसको अपनी सदृश बुद्धिमती व विद्यावती करनेमें सदैव यत्न करते रहना ही सच्चे बुद्धिमानका मुख्य कर्तव्य है. यदि तुम अपनी स्त्रीको ही विद्यादिकसे उन्नत करनेमें असमर्थ हुये तो फिर तुमसे देश व स्वजातिकी उन्नति होनेकी तो आशा ही क्यों कर हो सक्ती है?

इसीप्रकार स्त्रीको भी चाहिये कि-पति यदि अल्पबुद्धि व मूर्ख होय तो उसके मनोऽनुकूल चलकर अपने प्रेममें वश करकें अपनी सदृश बनानेमें पूर्णतया यत्न करें. स्त्री जिस कार्य्यको अच्छा समझकर करना चाहै और वह कार्य्य यदि बहुत खराब न होय और उसके करनेसे किसीकी हानि होना असंभव होय तो पति-को चाहिये कि-उसके करनेमें सम्मति दे. परन्तु उसके पीछें उत्तम अवसर देखकर शान्तभावसे उस कार्य्यके दोषगुण भलेप्रकार समझा देना चाहिये. जिस-से वह प्रसन्नताके साथ उन दोषोंको समझकर उस कार्य्यके करनेका सर्वथा त्याग कर दें. यदि सम्मति लेने समय ही खंडन मंडन करकें उस कार्य्यसे विरक्त करनेका उपाय करोगे तो सहस्रगुणा अच्छा होनेपर भी स्त्रीके मनको तुम्हारा उपदेश अच्छा नहिं लगैगा. इसीप्रकार स्त्रीको भी चाहिये कि-प्रथम ही पतिकी इच्छानुसार चलकर धीरें २ उस कार्य्यके गुणदोष दिखाकर पतिको उस कार्य्यसे विरक्त करें. इसप्रकार करनेसे जो स्त्री वशमें नहीं है, वह अवश्य ही पतिके वशीभूत हो जायगी और जो पति स्वेच्छाचारी है, वह भी स्त्रीके वशीभूत हो जायगा.

स्त्री यदि खराब होय तो भी उसके सद्गुणोंको स्मरण करकें उससे प्रेम कर-नेका यत्न करना चाहिये. यदि ऐसा करनेपर भी प्रेम उत्पन्न न होय तो ऐसे अनेक पुरुष हैं कि-जिनकी स्त्रियें अतिशय खराब हैं और वे प्रेमके साथ रहते हैं. उनको स्मरण करकें ही उससे प्रेम करना चाहिये. और कभी २ अपने रूप गुणका भी विचार करना चाहिये. इसीप्रकार स्त्रीको भी प्रवर्त्तना चाहिये. अर्थात् पति चाहे जितना खराब क्यों न हो उसके सद्गुणोंकी तरफ ही दृष्टि रखना चाहिये.

यदि भाग्यवशतः ऐसा ही बन पड़े कि स्त्रीके अथवा पतिके रूप गुण विद्या बुद्धि आदि सभीमें त्रुटि हैं तो भी धर्मशास्त्रानुसार परस्पर प्रेम करना ही उचित है. क्योंकि विवाहसम्बन्ध तो कुछ छुट ही नहिं सक्ता. उमर भर निबाहना ही पड़ै-गा. परस्पर प्रेम न होनेसे सुख होनेकी जगहँ दुःख ही होगा. इसकारण रूप गुण हो चाहे न हो मैं तो प्रेम करूंहीगा. इसप्रकार दृढप्रतिज्ञा करनेसे ऐसी अवस्थामें भी परस्पर प्रेम व सुख हो सक्ता है.

ऐसी बहुतसी स्त्रियें देखनेमें आती हैं कि-पतिके मुखसे अन्य स्त्रियोंके रू-

व गुणोंकी प्रशंसा सुननेसे नाराज होतीं हैं और पतिके चाल चलनमें सन्देह करने लग जातीं हैं. यदि स्त्रीका स्वभाव ऐसा हो तो पतिको चाहिये कि-उसके सन्मुख किसी स्त्रीके भी रूप गुणकी प्रशंसा न किया करें. इसी प्रकार स्त्रीके मुखसे अन्यपुरुषोंके रूप गुणकी प्रशंसा सुननेसे अनेक पति स्त्रीके चालचलनमें सन्देह करने लग जाते हैं. यह दोष पुरुषोंमें अधिक देखा जाता है. इस कारण स्त्रियोंको सदैव सावधान रहना चाहिये कि-अपने पतिके पास किसी अन्य पुरुषके रूप गुणकी प्रशंसा कदापि न किया करें. क्योंकि सन्देहरूपी पिशाच जिसके पीछे लग जाता है. वहां प्रीति व सुखका जड़मूलसे नाश हो जाता है.

बहुधा कर एकान्तमें परस्त्री व परपुरुषके साथ एकत्र रहना व वार्तालाप करना किसी प्रकार भी पति व पत्नी दोनोंको ही उचित नहीं. क्योंकि ऐसा करनेसे मन चलायमान हो जाता है. यदि किसीका मन चलायमान न भी होय तो दोनोंको परस्पर संदेह होनेकी तो पूर्णतया संभावना है. जिससे किसी प्रकारका सन्देह हो जाय, ऐसा कार्य्य क्या स्त्री क्या पुरुष किसीको भी करना उचित नहीं.

जिस बातके कहनेसे वा जिस उपहासके करनेसे स्त्रीके मनको कष्ट हो, उसके त्याग करनेका यत्न पतिको सदा ही करना चाहिये. अनेक पति स्त्रीके माइरे सम्बधी दोषोंको प्रगट करके हंसी करनेमें और स्त्रीको चिड़ानेमें कसर नहिं करते, परन्तु ऐसा करना अतिशय अनुचित है. क्योंकि इससे स्त्रियोंके चित्तपर अतिशय चोट लगती है. यह दोष स्त्रियोंमें बहुत कम देखा जाता है. परंतु अमीरोंकी पुत्रियोंमें प्रायः देखनेमें आता है कि-वे पतिके माता पिता दादे आदिके दोषोंको प्रगट किया करतीं हैं. परन्तु यह आदत सर्वथा छोड़ देना चाहिये.

पति यदि दरिद्री व छोटी उमरका व वृद्ध होतो स्त्रियोंको असंतोष प्रगट करना कदापि उचित नहीं' क्योंकि स्त्रीको असन्तुष्ट देखनेसे पतिको जो कष्ट होता है, वह वचनके अगोचर है. इस कारण स्त्रियोंको इस विषयमें सावधान रहना चाहिये. स्त्रीको प्रसन्न रखनेकी सबके ही आन्तरिक इच्छा है, परन्तु दुर्भाग्यवशतः सुखी नहिं कर सके तो वे मन ही मनमें अतिशय दुःखित होते हैं. तिसपर भी यदि स्त्रियोंकी असन्तुष्टताका प्रकाश होना व कटूक्तिका होना तो कटेहुये घावपर नमक बुरकाना है. सो यह सभी स्त्रियोंको ध्यानमें रखना चाहिये.

स्त्री पतिकी कीर्ति सुनती है तो अपनेको अतिशय धन्य मानती है और दिनोदिन पतिसे अतिशय अनुराग प्रगट करती है. इस कारण पुरुषोंको चाहिये कि-हमेशह सत्कार्य्योका अनुष्ठान और सत्कार्य्योंमें साहस प्रगट करनेका प्रयत्न करै. परन्तु उसकेलिये घर आकर स्त्रीके पास अपनी झूंठी बहादुरी दिखाकर प्रशंसा न किया करैं; क्योंकि तुममें बहादुरी है या नहीं इस बातकी परीक्षा

करते स्त्रीको कुछ भी देर नहिं लगती. अनेक स्त्रियोंमें भी यह दोष देखा जाता हैं सो सर्वथा त्याग करना चाहिये. हाँ कथा प्रसङ्गसे एक दो गुण अपने मुखसे प्रगट करदेनेमें कोई हानि नही है किन्तु प्रीति बढ़नेका कारण है.

पतिको किसी प्रकार भी कष्ट न हो, इस विषयमें स्त्रियोंको विशेषतया सावधानी रखनी चाहिये. पति यदि किसी दुश्चिन्तामें अधीर होजाय तो धीरें २ सान्त्वन करना चाहिये. और पतिके साहसको बढ़ाना चाहियें. क्योंकि प्रियतमाकी सान्त्वनासे कोई भी दुश्चिन्ता नहिं रहने पाती. और स्त्रीकी तरफसे साहस होनेपर पुरुषगण हजारों विपदोंको टाल सक्ते हैं. स्वामीके रुग्न होनेपर तो सेवा करना ही है. परन्तु स्वस्थ अवस्थामें भी खाने पिलाने नहाने आदिमें भलेप्रकार सेवा करनी चाहिये. स्त्रीको रोग शोक होजाय तो पतिको करना उचित है. यद्यपि स्त्री पतिसे टहल कराया नहिं चाहती, परन्तु पतिको इस विषयमें उदासीन नहिं होना चाहिये. खाने पीनेके विषयमें स्त्री अपने मुखसे कुछ प्रगट न करे तो भी पतिको दृष्टि रखनी चाहिये.

सतीत्व (पतिव्रता) स्त्रीका मुख्य आभूषण हैं. यह बात सभी जानते हैं. स्त्रीमात्र इस बातको भलेप्रकार जानती है. अतएव इस बातको विशेषतया कहनेकी कोई आवश्यकता नही है. पति स्त्रीके हजारों अपराधोंको क्षमा कर सक्ता है, परन्तु असतीत्वदोष (व्यभिचारदोष) को किसी प्रकार भी क्षमा नहिं कर सक्ता. सती पतिव्रता स्त्री घरकी लक्ष्मी होती है और आदर करने योग्य वस्तु है. इस बातको स्मरण रख समस्त स्त्रियोंको चलना चाहिये. अर्थात् प्राणान्त होनेपर भी परपुरुषसे रमनेकी बांछा स्वप्नमें भी नहिं करनी चाहिये. आजकल इस दोषसे दूषित बहुधा पुरुष ही देखनेमें आते हैं. बलके बहुतसे अविवेकी तो अपने व्यभिचारदोषको किसी अपराधमें ही नहिं गिनते. और न आत्मीय स्वजन व स्त्रीको मालूम होनेपर लज्जित वा भयभीत ही होते. समाजकी तरफसे (पंचोंकी तरफसे) भी पुरुषके व्यभिचारी होनेका कोई विशेष प्रायश्चित्त (दंड) देनेमें नहिं आता. परन्तु चाहे कोई दंड दो, अथवा न दो, परन्तु हमेशह याद रखना कि इस प्रकारके आचरणसे स्त्रियोंको मर्म्मान्तिक यन्त्रणा (पीडा) सहनी पड़ती है कष्टके मारे उनका हृदय फट जाता है. तुमारे उपरि उनका विशेषतया अधिकार नहीं है; इसकारण तुमसे न कहकर मन ही मनमें जलतीं रहतीं हैं. घरके कार्य्योंमें भी उनका इतना उत्साह नहिं रहता. और जिनके पति निर्दोष हैं. उनके निकट हमेशह लज्जित ही रहा करतीं हैं. ऐसा भी देखनेमें आया है कि जिसका पति व्यभिचारी है, उसके चित्तसे भी क्रम २ से व्यभिचारदोषकी घृणा कम हो जाती है, और वह भी परपुरुषसे रत हो जाती है. इसकारण ऐसे

दुखदायक व हानिकारक पापकार्य्यमें लिप्त होना किसी भी पतिको उचित नहीं है. यदि दैवयोगसे वा अज्ञानतासे एक दो बार ऐसा पापकार्य्य पतिपत्नीमेंसे किसीके द्वारा बन भी गया हो तो वह कदापि प्रकाशित नहिं करना चाहिये. क्योंकि उसके प्रकाश होनेसे हमेशाहके लिये प्रीति टूट जानेकी संभावना है. बलके स्त्रीका यह दोष प्रगट होनेसे तो बहुत ही हानि होती है.

पतिपत्नीका हमेशाह एक ही जगहैं रहना हो, इस विषयमें अतिशय प्रयत्न करना चाहिये. क्योंकि एक जगहैं रहनेसे प्रीतिकी वृद्धि होती है. चाल चलन भी ठीक रहता है. यदि कारणवशात् पतिको परदेशमें रहना पड़ै अथवा दिन-भर उनको दूकान वा बाजार व नोकरीमें रहना पड़े तो दो चार अन्य गृहस्थों-की सच्चरित्रा स्त्रियोंसे सदैव वार्तालाप होता रहै; इसप्रकारके बन्दोबस्तसे रहन चाहिये. सो दश सद्गृहस्थोंके मुहल्लेमें रहनेसे ही यह प्रबंध हो सक्ता है. एक ही गृहस्थको अकेला रहनेमे वार्तालाप करने योग्य स्त्रियोंकी अप्राप्तिमें लाचार होकर स्त्रियें नोकर व नोकरानीके साथ सदैव वार्तालाप करके दिन काटतीं हैं और नोकर नोकरानीके साथ सदैव वार्तालापका होना वा घनिष्ठता उत्पन्न होना कदापि निरापदका कारण नहीं हो सक्ता.

पित्रालयमें (माहेरमें) एक ही बार बहुत काल पर्यन्त स्त्रियोंको कदापि नहिं रहना चाहिये. बडे लोगोंकी पुत्रियें अथवा दरिद्र पुरुषोंकी स्त्रियें बहुधा पित्रालयमें ही दिन विताया करतीं हैं. परन्तु इस प्रकार करना अतिशय अन्याय है. हमेशाह माके घर रहनेसे प्रथम तो गृहस्थपनेके कार्य्योंकी शिक्षामें बाधा पड़ती है. दूसरे व्यभिचार दोष भी बन जाता है. इसकारण हे अमीरोंकी लड़कियो! तुम हमेशाह पिताके घर रहनेमें लज्जा नहिं समझतीं? जब विवाह होगया तभीसे तुम पराई हो गई! अब सास शसुरकी सेवा करकें उनकी प्यारी बनकर गृहस्थ धर्मको पालन करो! जिससे तुमको सुख हो. और हे दरिद्रपतिकी स्त्रियो! तुमको निरुपाय होकर बहुधा पिताके घर रहना पड़ता है. तो अत्यन्त सावधानीके साथ रहना चाहिये. सशुरके घर जिसप्रकार लज्जा और शीलके साथ रहती हो उसीप्रकार पिताके घर भी पतिका ध्यान लगाये रहा करो.

बहुतसे लोग दूरकी सोचकर अदूरदृष्टिदोषसे दूसरा विवाह करलेते हैं. परन्तु प्रथम स्त्रीके वर्तमान रहते दूसरा विवाह करना नीच पुरुषोंका काम है. क्योंकि आजकलके समयमें दो स्त्रीका पति कदापि सुखी नहिं हो सक्ता. दूसरा विवाह करनेसे दोनोंके ही अपार दुःख व द्वेषभाव प्रबल हो जाते हैं. शेषमें चालचल-न भी ठीक नहिं रहते. इसप्रकारकी स्त्रियोंकी अतिशय शोचनीय दशा हो जाती है. परन्तु जो कुछ हो, ऐसी अवस्थामें भी स्त्रियोंको चाहिये कि-जिससे पति

सुखी हो सकें, उसी माफक प्रवर्ते. पतिके दोषी होनेपर भी अपने १ कर्तव्यमें चूकना नहिं चाहिये. दूसरा विवाह करनेके समय सबको विचार पूर्वक काम करना चाहिये.

पैंतीस वर्षके बाद किसीको भी विवाह करना उचित नहीं. क्योंकि आजकल पुरुषगण प्रायः ५० वर्षके भीतर ही मर जाते हैं, चालीस वर्षके बाद अनेक पुरुषोंको इन्द्रियक्षीणता व शारीरिक दुर्बलता प्राप्त हो जाती है. ऐसी अवस्थामें १२ वर्षकी सुकुमार बालिकासे विवाह करके हमेशहकेलिये उसको वैधव्य दुःखसागरमें डबो देना अत्यन्त निर्दयी कषाइयोंका काम है. वृद्ध अवस्थामें बालिकासे विवाह करकें युवक पुरुषोंकी सदृश चलनेसे जो निन्दा व हँसी होती है, उसका कुछ भी विचार नहिं करते; सो यह बडी शर्मकी बात है.

सांसारिक कार्योंके करनेमें स्त्रीपुरुषोंमें प्रायः विवाद खड़ा हो जाया करता है. इस जगहँ यदि दोनोंमें स्त्री अधिकतया क्रुद्धित हो जाय तो पतिको चुप रहना चाहिये. और पति अधिक क्रुद्धित हो जाय तो स्त्रीको चुप रहना चाहिये. यदि दोनों ही जीतनेकी इच्छा करेंगे तो विवाद बहुत बढ़ जायगा. क्रोध शान्त होनेपर किसी समय दोषगुणका विचार किया जायगा तो हकीकतमें किसका अपराध है, सहज ही मालूम हो जायगा और विवाद भी मिट जायगा. क्रोधके समय कोई भी अपना दोष स्वीकार नहिं करता. विवाद (झगड़ा) होनेपर चुप रहना बहुत कठिन है, परन्तु तो भी चुप होनेकेलिये उपाय करना चाहिये.

शिक्षा.

(२)

पुरुषगण तो प्रायः सभी पढ़ना लिखना जानते हैं परन्तु हमारे यहांकी स्त्रियें सबकी सब अक्षरज्ञानसे शून्य हैं, ऐसा कहें तो भी अत्युक्ति नहीं है. आजकल पुरानी रोशनीवालोंकी अपेक्षा नयीरोशनीवाले बाबुगण अधिकतर विद्वान् और रसिक भी अधिकतर होते हैं. जिसप्रकार पुरानी चालवाले मूर्खा स्त्रीके साथ सुखसे कालव्यतीत कर सक्ते हैं, उसप्रकार हमारे नवयुवक बाबुगण कदापि नहिं कर सक्ते. स्त्री बिलकुल ज्ञानशून्य होनेपर हमारे बाबुगणोंको दुःखका पार नहिं रहता. स्त्रीको सुशिक्षित करनेकेलिये अतिशय उद्विग्न रहते हैं. स्त्री यदि कुछ भी लिख पढ़ सक्ती हो तो हमारे बाबुगण अपनेको अतिशय धन्य मानते हैं. भलेप्रकार पढ़ना लिखना जाननेसे स्त्रियोंका कितना उपकार होता है, उसके समझानेकी कोई आवश्यकता नहीं हैं. क्योंकि आज कल प्रायःसभी जने इस बातको जानते

समगये हैं कि-स्त्रीका सुशिक्षित होना अतिशय आवश्यकीय कार्य है. परन्तु स्त्रियोंके साधारण लिखने पढ़नेसे बहुतसे महाशय हानि समझते हैं. और कहते भी हैं. कि "अल्पविद्या भयंकरी" इससे सिवाय हानिके कोई लाभ नहिं होता. इसकारण वे स्त्रीशिक्षाकेलिये कुछ भी प्रयत्न नहिं करते और किसीको साधारण लिखना पढ़ना आता भी हो तो उसको उत्साह न देकर उल्टी निंदा करते हैं. सो यह उनकी बडी भारी भूल है. कल्पना करो कि-तुम विदेशमें हो और तुम्हारी स्त्री लिख पढ़ सक्ती है तो तुम पत्रद्वारा अपने हृदयके कपाट खोलकर आन्तरिक सुखदुःखको प्रकाशित कर तृप्तिलाभ कर सके हो. सांसारिक गुप्तवार्ता केवलमात्र स्त्रीको ही कहनेकी आवश्यकता हो तो सहजमें ही पत्रद्वारा कह सके हो. यदि स्त्रीको लिखना पढ़ना नाहिं आता हो तो यह इच्छा कदापि पूर्ण नहिं हो सक्ती. इसीप्रकार विरहकातरा स्त्रियें भी पत्रद्वारा अपने प्रियपतिके चरणोंमें अपने सुखदुःखको गुप्तभावसे निवेदन कर बहुतसा दुःख दूर कर सक्ती हैं. यदि किसी प्रकारकी गुप्त सम्मति लेनी हो तो पत्रद्वारा भले प्रकार ली जा सक्ती है. इसके अतिरिक्त हिन्दीभाषामें लिखेहुये धर्मशास्त्र और उत्तमोत्तम सम्वादपत्र तथा उत्तमोत्तम नाटक उपन्यास पढ़कर ज्ञानकी उन्नतिके सिवाय सुखसे काल व्यतीत कर सक्ती हैं. और जो स्त्री पढ़ीलिखी हुई होती है उसके बालक भी शीघ्र ही विद्याभ्यासमें मग्न हो अतिशय विद्वान् हो जाते हैं. क्योंकि बालक बहुधा कर माताके ही पास अधिक रहता है. सुशिक्षित माता बालकको चाहे जैसा सहजमें ही बना सक्ती हैं. कोई २ अविवेकी ऐसा भी कहते हैं कि-स्त्रियोंका पढ़ना लिखना. असद्इच्छा साधनेका प्रधान उपाय है. उनसे हम पूछते हैं कि-पढ़ीलिखी स्त्रियोंमेंसे कोन २ सी कुपथगामिनी हो गई हैं? हिताहितज्ञान शून्य वे पढ़ी स्त्रियें भी कुसंगतिमें पड़कर कुपथगामिनी हो जातीं हैं. फिर लिखने पढ़नेको ही किसप्रकार दोष दे सके हो? बहुतायतसे अश्लील पुस्तकें पढ़नेसे किसी २ स्त्रीकी कुप्रवृति प्रबल हो सक्ती है. परन्तु स्त्रियें ऐसी पुस्तकें न पढ़ने पावे, इस विषयमें पतिगणोंको दृष्टि रखनी चाहिये. जब स्त्री पढ़ीहुई न हो, उस समय भी तो उसके चालचलन ठीक रखनेकेलिये यत्न करते हो, उसी प्रकार विद्यापढ़नेके पहिले पीछें भी सावधानी रखनेमें क्यों नहीं यत्न करते?

बहुतसे महाशय कहा करते हैं कि नाटक और उपन्यासोंके पढ़नेमें बडी हानि है. परन्तु आजतक प्रायः सभी युवकयुवती गण नाटक उपन्यासोंके पढ़नेमें अतिशय लवलीन देखनेमें आते हैं. इसप्रकार उपन्यास प्रियतासे कोई विशेष हानि आजपर्य्यन्त देखनेमें नाहिं आई. बलके उत्तमोत्तम नाटक उपन्यासोंके

पढ़नेसे नवयुवक बाबुओंका स्वदेशानुराग बढ़ता जाता है, और बहुतसे सत्कार्योंमें प्रवृत्ति होने लगी. देशके असदाचार दूरकर सदाचारोंके प्रचार करनेमें साहस होता है. और अपनी स्त्रीको हृदयसे प्रिय समझने लगजाते हैं. "पति ही स्त्रीका जीवनसर्वस्व है", यह बात स्त्रियें उपन्यासोंके प्रत्येक पृष्ठसे सीखती हैं. "शतसहस्र प्रलोभन होने पर भी पातिव्रत्यधर्मकी रक्षा करनी चाहिये." ऐसी शिक्षा प्रत्येक नाटक व प्रत्येक उपन्यास स्पष्टतया देता है. "दुष्ट पाखंडी अन्यायियों के आधीन होनेपर किस चतुराई और छलकपटसे सतीत्वरक्षा करना चाहिये" यह बात भी सिवाय नाटक उपन्यासोंके किसी प्रकार भी हृदयंगम नहिं हो सकी. किस किस गुणसे पतिकी प्यारी हो सक्ती है सो उपन्यासोंकेद्वारा ही स्त्रियें जान सक्ती हैं. क्योंकि जितने उपन्यास बनाये जाते हैं, वे समाजके आचार व्यवहार और मनुष्योंके चरित्रका अवलम्बन करके ही बनायेजाते हैं. इसकारण "नाटक उपन्यासों के पढ़नेसे यथेष्ट लाभ होता है" यह बात अवश्य ही स्वीकार करनी पड़ेगी. किन्तु उपन्यासमें किसी प्रेमी व प्रेमिकका—व किसी स्वदेशानुरागी साहसी पुरुषका चरित्र रहता है. वह उपन्यास अधिक मनोरञ्जक होता है. ऐसे उत्तमोत्तम नाटक उपन्यास बंगभाषा—व महाराष्ट्रीय तथा गुर्जर भाषामें तो बहुतसे देखनेमें आते हैं, परन्तु खेद है कि—हिन्दीभाषामें इसप्रकारके नाटक उपन्यासोंका तो प्रायः अभावसा ही प्रतीत होता है. किन्तु ऐसे उपन्यासोंकी अप्राप्ति है, ऐसा समझकर चुप नहिं रहना चाहिये. बलके ऐसा चरित्र अपने आप आदर्शरूप करके अपने गुणोंकी वृद्धि करनी चाहिये. उपन्यासमें लिखीहुई प्रणयिनीकी सदृश अपनेको सहधर्मिणी नहिं समझो तो क्षोभ नहिं करना चाहिये, किन्तु धीरें २ उसीप्रकार बननेका यत्न करना चाहिये. बहुतसे नाटक उपन्यासोंमें प्रेमका विशेषतया वर्णन हुवा करता है, सो पतिके विदेश होनेपर अथवा पत्नीके निकट न होनेपर ऐसे नाटक उपन्यासोंको नहिं पढ़ना चाहिये. पतिपत्नी दोनोंके एकत्र होनेसे ऐसे नाटक उपन्यासोंके पढ़नेमें किसी प्रकारकी भी हानि नहीं है. जिसप्रकार नाटक, रास, तमासे, देखते हैं. उसी प्रकार नाटक उपन्यासोंका भी पढ़ना है.

स्त्रियें जिससे हाथकी चिठ्ठी पत्री अपनी मातृभाषा हिन्दीमें भलेप्रकार लिख पढ़ सकें, इतनी शिक्षा तो अवश्य ही होनी चाहिये. क्योंकि कहींका पत्र आता है तो दश बारह वर्षके लड़कों तककी खुशामदी करनी पड़ती है. बहुतसे महाशय स्त्रियोंको उर्दू तथा अंग्रेजी विद्या पढ़ाना चाहते हैं. सो उनकी बड़ी भारी भूल है. स्त्रियोंको ये विदेशी भाषायें कदापि नहिं पढ़ानी चाहिये. क्योंकि इन भाषाओंके नाटक उपन्यासादि प्रायः असदाचारकी शिक्षा देनेवाले ही हुवा करते

है. बल्के पुरुषोंको भी इन भाषाओंके नाटक उपन्यास नहिं पढने चाहिये. हां उत्तमोत्तम नाटक उपन्यास पढने हों तो बंगभाषा वा मराठी गुजराती भाषा पढिये अथवा अपनी प्राणप्रियाको भी पढाइये, इसमें कोई विशेष हानि नही है किन्तु लाभ ही है.

स्त्रियोंको लिखने पढनेके सिवाय कुछ २ गणित भी अवश्य पढना चाहिये. क्योंकि घरके खर्चका हिसाब स्त्रियोंके हाथ रखनेसे व्यर्थव्यय होने नहिं पाता. व गणित पढीहुई स्त्रियोंसे रुपया दो रुपया कोई ठगकर भी नहिं ले जा सक्ता.

इसके सिवाय स्त्रियोंको गर्भवती [illegible] रोगादिकसे रक्षा करना, बालकोंका किसप्रकार पालन पोषण करना इत्यादि गृहचिकित्सा व धर्माचरणका ज्ञान भी अवश्य होना चाहिये.

प्रतिदिन जिससे लिखने पढनेकी प्रवृत्ति चलती रहै, इस विषयमें भी पतिपत्नी दोनोंको ही दृष्टि रखनी चाहिये. प्रतिदिन थोडा २ पढनेसे वहुत कुछ ज्ञानकी प्राप्ति हो सक्ती है. सो पतिपत्नीको एक ही जगहँ बैठकर उपन्यासादि पढने चाहियें. जिससे स्त्रीकी शिक्षा होनेमें पूरी सहायता होती रहै. बल्के नाटक उपन्यास स्त्रीके द्वारा ही पढाने चाहिये. जिससे दोनोंको ही आमोदके साथ उत्तमोत्तम शिक्षावोंका लाभ हो. जो अंश कुछ कठिन हो, वह स्त्रीको अच्छीतरहँ समझा देना चाहिये.

स्त्रियोंको चाहिये कि लिखने पढनेकेलिये सांसारिक कार्य्योंमें न्यूनता न करें किन्तु गृहकार्य्योंसे अवसर मिलनेपर पढना चाहियें.

स्वाधीनता.

(१)

स्वेच्छानुसार हरएक कार्य्य करनेकी शक्तिको ही स्वाधीनता कहते हैं. यदि तुम इच्छापूर्वक दास अथवा दासी भी होओ तो तुमारी स्वाधीनता हरी गई समझना चाहिये. और जो कोई तुमको जबरदस्ती राजत्व भी कराने तो भी तुमारी स्वाधीनता नष्ट हो गई. स्वेच्छाधीन दास और दासी व राजा और रानी बराबर हैं. अर्थात पराधीनता होनेपर राजा और रानी भी मोल लिये हुये नोकरकी समान हैं. स्वाधीनतासे ही जीवोंको सम्पूर्ण सुख होता है. अनेक महाशय समझते हैं कि—"विवाह करनेसे स्वाधीनता नष्ट हो जाती है" सो यह भ्रम है. क्योंकि पति और स्त्री दोनों ही अपनी इच्छापूर्वक विवाह करते हैं. सो जिस कामको इच्छापूर्वक स्वीकार किया जाय, उससे स्वाधीनता किसप्रकार नष्ट हो सक्ती है ! कि-

न्तु पति यदि जबरदस्तीसे स्त्रीको दयानन्दीय मत ग्रहण करावे अथवा निराकार ब्रह्मकी उपासना करावें. स्त्री यदि अमीरकी पुत्री होनेके कारण पतिको हमेशाहके लिये अपने पिताके घर ही रखना चाहै तो बेशक स्वाधीनता नष्ट हो सक्ती है.

यह सब कोई जानते हैं कि—समस्तसुखोंकी जड़ स्वाधीनता है. सो जिसप्रकार स्वाधीनता नष्ट न हो, इस विषयमें पति पत्नी दोनोंको ही दृष्टि रखनी चाहिये. हमारे देशमें पुरुषोंको स्वाधीनताका घाटा नहीं है. केवलमात्र वृद्ध अवस्थामें ही विघ्न पड़ता है. उससमय वे अतिशय पराधीन हो जाते हैं. वृद्धा स्त्रियोंको प्रायः स्वाधीनता होती है. परन्तु "युवती स्त्रियोंको तो कुछ भी स्वाधीनता नहीं है" ऐसा कहैं तो भी कुछ अत्युक्ति नहीं. क्योंकि युवा स्त्रियें न तो अपनी इच्छानुसार लिख पढ सक्ती हैं और न अपनी इच्छानुसार धर्मकार्य्य व स्वामी-सेवा ही कर सक्ती हैं. बलके खाने पीनेमें भी असमर्थ रहती है. कहीं पर तो पति, कहीं पर सासु शसुरे, कहीं पर पड़ोसी प्रायः सभी जने युवति स्त्रियोंको अपनी आज्ञानुसार चलाते रहते हैं. बालक पनसे ही पराधीन होनेसे उनके मनमें कभी उत्साह उत्पन्न नहिं होता और कार्य्यकरनेकी सामर्थ्य भी प्राप्त नहिं होती. तथा कर्त्तव्याकर्त्तव्य निश्चयकरनेकी शक्ति भी नष्ट हो जाती है.

आजकल विद्याकी उन्नतिहोनेसे विवाहित युवक बाबूगण अपनी २ स्त्रियोंको स्वाधीनताके साथ पढ़ना लिखना व धर्मध्यानकरने आदि कार्य्योंमें उत्साह देने लगे. किन्तु इसके साथ ही साथ बडी भारी हानि यह होने लगी कि—पतिके उत्साह देनेसे बहुतसी स्त्रियें एकदम शिर पर चढ़ जाती हैं. जो करना विचारती हैं, वह अवश्य ही करती हैं. जो वह समझलेती हैं, उसमें फिर किसीका भी उपदेश नहिं सुनती. बलके अन्तमें अपने प्रियतम पतिकी आज्ञा भी नहिं मानती. इसकारण इतनी नयी उमरमें इसप्रकार स्वाधीनता देना अतिशय हानि कारक है. इसप्रकारकी स्वाधीनताको स्वाधीनता नहिं कही जा सक्ती. हिताहित ज्ञानशून्य अल्पबुद्धि स्त्रियोंसे ही ऐसा अपराध बनता है. क्योंकि स्वाधीनताके साथ चलनेकेलिये अतिशय बुद्धिविवेककी आवश्यकता है. विना बुद्धिके किसीपर हुकम चलाना हास्यास्पद है. युवतीगण! तुम यदि गुरुजनोंकी आज्ञा पालन नहिं करोगी और अपने अश्रितजनोंके सुखदुःखकी तरफ ध्यान नहिं रखोगी तो तुम्हारे पर दुःखका समय आवैगा, उस समय तुम्हारे दुःखमें कौन दुःखी होगा? और भी विचार करो कि—यौवनावस्थामें सांसारिक समस्त कार्य्य गुरुजनों (सासश्वसुरादिकों) से ही सीख सक्ती हो. पतिके पास कुछ भी नहिं सीख सक्ती. तब गुरुजनोंकी आज्ञा न माननेसे गृहस्थपनेमें किस प्रकार काम चल सक्ता है? फिर

स्वाधीनतासे सुख नष्ट हो जाय, दुःख होनेकी संभावना हो, ऐसी स्वाधीनताको स्वाधीनता किसप्रकार कह सके हैं ! क्योंकि सुखकेलिये और उन्नतिकेलिये ही स्वाधीनताकी आवश्यकता है. इसकारण गुरुजनोंके व पडोसियोंके मनोऽनुकूल चलकर ही अपने कार्य्यसाधन करने चाहिये. इसमें स्वाधीनता नष्ट नहिं होती क्योंकि इसप्रकार परके मनोऽनुकूल चलना तुम अपनी इच्छासे करती हो इसकारण तुम स्वाधीन ही हो.

हमने ऊपर जो कुछ लिखा उससे बहुतसी स्त्रियें सायद अच्छी तरहँसे नहिं समझी होंगी. क्योंकि हम स्वाधीनतासे चलनेकी भी सम्मति देते हैं और गुरुजनोंकी आज्ञानुसार चलनेकी भी प्रार्थना करते हैं. सो यह दोनों बात कैसें बन सक्ती हैं? इसकारण एक दृष्टान्त देकर समझाया जाता है.

कल्पना करो कि-तुह्मारा पति तो तुमको लिखने पढ़नेकेलिये आग्रह करता है. और तुह्मारा मन भी पढ़नेको चाहता है. और सास ससुरका इसमें मत नहीं है, तो ऐसी अवस्थामें पहिले गुरुजनोंकी सेवा शुश्रुषा करके गुरुजनोंकी प्यारी बनना चाहिये. तत्पश्चात् पढ़ने लिखनेका प्रारंभ करना चाहिये. क्योंकि गुरुजन जब तुमारे गुणोंसे प्रसन्न होजायगे तो तुह्मारे लिखने पढ़नेमें कदापि बाधा नहिं डालेंगे. पढ़ना लिखना प्रारंभ करकैं इसप्रकारसे सावधान रहना चाहिये कि-लिखने पढ़नेके कारण गुरुजनोंकी सेवा सुश्रूषा करनेमें न्यूनता व उनकी आज्ञाका उल्लंघन न हो. इस प्रकार चलनेसे स्वाधीनतामें कदापि बाधा नहिं पड़ सक्ती. और गुरुजन भी असन्तुष्ट नहिं होंगे.

इस विषयमें पुरुषोंको भी सावधान रहना चाहिये कि-जिस प्रकार मातापितादि गुरुजन असन्तुष्ट न हो, ऐसा उपाय अवलम्बन करना उचित है. अब पुरुषोंकी स्वाधीनताकी तो हद ही नहीं है. जो इच्छा हो सो कर सक्ते हैं. भय रहित हो मद्यपानादिकमें लवलीन हो जाते हैं. व्यभिचार–सेवनसे आत्माको कलंकित करते हैं, आयकी अपेक्षा अधिक व्यय करके अनेकप्रकारके आमोदप्रमोद में उन्मत्त हो जाते हैं. अपनी स्त्रीकी तरफ दृष्टि भी नहिं करते. पुरुषोंका इसप्रकार आचरण होना स्वाधीनता नहीं है. किन्तु स्वेच्छाचार है. पुरुषोंको ऐसा स्वेच्छाचार बिलकुल छोड देना ही कल्याणकारी है. पतिका इसप्रकार स्वेच्छाचार स्वाधीनताके साथ दमन करना प्रत्येक स्त्रीका कार्य्य है. पतिका भय करना अथवा पति पूज्य देवता है, ऐसा समझकर संकुचित होना किसी प्रकार भी उचित नहिं समझा जाता. हानिकारक कार्य्योंका निषेध करना, व लाभदायक कार्य्योंका अनुष्ठान करना ही स्वाधीनताका प्रधान उद्देश्य है.

पतिको सन्मार्गमें रखने, आज्ञा उलंघन करनेकी दासदासीकी आदत को दमन करना, पुरुषोंकी बदमासी छुटानेकेलिये तिरस्कार करने, तथा अपने कुटुम्बका जिसमें हित हो, ऐसे सत्कार्य्योंके करनेमें निःसन्देह स्वाधीन रहना चाहिये.

गृहिणीगण! इन कारणोंसे ही तुमको स्वाधीनताकी आवश्यकता है. इसप्रकार करनेमें बुद्धिविवेककी शक्ति होनेहीसे तुह्मारी स्वाधीनता सार्थक है. अन्यथा कदापि लाभदायक नहीं है. ऐसा नहिं होना चाहिये कि–तुम भी पुरुषोंकी तरहँ स्वेच्छाचारी हो जाओ. विनयके साथ कहनेसे अथवा मान करने व रोनेसे काम निकल जाय और पति सन्मार्गमें आजाय तो तिरस्कारादि दण्डविधि कदापि काममें नहिं लाना चाहिये. अब दृष्टान्त देकर कहांतक समझाया जाय, स्वाधीनतासे चलनेमें अनेक जगहँ अपनी बुद्धिसे हिताहितका पूर्ण विचार करके चलना चाहिये. ऐसा नहिं करोगी तो अनेक हानियें उठाओगी. यदि स्वयं समझकर विचारपूर्वक चलनेमें असमर्थ हो तो हमेशह अपने पति व सास श्वसुरादि गुरुजनोंकी आज्ञानुसार चलना ही कल्याणकारी है.

अनेक महाशय अपनी स्त्रियोंको मोल ली हुई दासीकी सदृश समझते हैं. स्त्री किसी विषयमें कर्तृत्व करना चाहती है अथवा पतिकी किसी भूलपर कुछ क्रोध प्रकाश करती है तो पतिको यह बात असह्य होजाती है. "स्त्री पुरुषकी सम्पूर्णतया अधीन है. पति जो कुछ करे उसके दोष गुण विचार करनेकेलिये स्त्रीको कुछ भी अधिकार नहीं है. पतिका अन्याय कार्य्य देखकर स्त्रीका क्रोध करना पति आज्ञाका भंग करनेके सिवाय और कुछ नहीं है." इसप्रकार समझते हुये अनेक महाशय अपनी २ स्त्रियोंपर अत्यन्त असन्तुष्ट रहते हैं और अन्यायाचरण करते हैं. पुरुषोंका इसप्रकार व्यवहार करना सर्वतया न्याय विरुद्ध है. और स्त्री स्वाधीनताका नष्ट करनेवाला है. भलाई समझकर स्त्री जो कुछ कहे वा जिसकेलिये तिरस्कार करे तो क्रोध न करके सुन लेना ही उचित है उसको धमकी देकर चुप करना स्वेच्छाचारी अन्यायी पतिका कार्य्य है. स्त्रीकी परामर्श ग्रहण करने अथवा उसका योग्य तिरस्कार सह्य करलेनेसे स्वाधीनतामें कदापि हानि नहिं आती, यह बात स्मरण रखना समस्त पुरुषोंका परम कर्त्तव्य है. और पति यदि किसी अपराधके कारण तिरस्कार करे तो स्त्रीको सह्य कर लेना चाहिये. इसप्रकार सह्य करलेनेमें स्वाधीनता नष्ट नहिं होती. दोनों ही अपनेको स्वाधीन समझ कर एक दूसरेकी बात नहिं सुनेंगे तो फिर घरमें शान्ति नहिं रह सकी बलके अहोरात्र कलहके साथ दिन काटने पड़ेंगे. "अपनी इच्छासे आधीनता ग्रहण करनेमें स्वाधीनताकी हानि नहिं होती" यह बात याद रखकर परस्पर संमति लेनेमें वा तिरस्कार सहलेनेमें किसीका भी अपमान नहिं होता.

स्वाधीनता प्राप्त होकर अनेक गृहिणीगण अतिशय बढ जातीं हैं. जो काम पतिके करने योग्य होता है अथवा जिस कामके करनेमें पति समर्थ हो, उस कामको करनेकेलिये अपने आप दौड़तीं हैं, सो इसप्रकार करना उचित नहीं. इससे पतिका मन विरक्त हो सक्ता है. इसकारण जिसका जो कार्य्य है, उसीको वह कार्य्य करना चाहिये.

अनेक स्त्रियें पतिको प्रसन्न रखनेकेलिये जिस धर्ममें अपना श्रद्धान (विश्वास) नहीं, उस धर्मको ग्रहण करलेतीं हैं. अर्थात् अपने सनातन धर्मको व धर्माचरणको त्याग कर दयानन्दी आदि आधुनिक मतोंको ग्रहण करलेतीं हैं. सो ऐसा कदापि नहिं करना चाहिये. धर्मके विषयमें स्वाधीनताके साथ परीक्षापूर्वक जिसपर अपना दृढश्रद्धान हो, वही धर्म ग्रहण करना चाहिये. दूसरोंकी देखादेखी व कहनेसे धर्माचरणका करना उचित नहिं समझा जाता.

धन.

(४)

धनकी महिमा वर्णन करनेकी कोई आवश्यकता नहीं है. क्योंकि—आबालवृद्ध भलेप्रकार जानते हैं कि पैसेके विना कोई भी सांसारिक कार्य्य नहिं चल सक्ता. परन्तु खेदका स्थान यह है कि—धनकी इतनी उपकारिता जाननेपर भी इसका संचय करना व व्यय करना नहिं सीखते. क्योंकि—व्ययके दोषसे अनेक गृहस्थगण दरिद्री हो गये और संचयगुणके प्रभावसे अत्यन्त अल्प आयवाले भी धनाढ्य हो जाते हैं.

सबको ही अपनी २ अवस्थाके अनुसार व्यय (खर्च) करना चाहिये. अनेक महाशयोंको दूसरोंकी देखादेखी व्यय करनेका रोग हो गया है, सो यह अत्यन्त हानिकारक है. कोई २ महाशय तो ऋण (कर्ज) लेकर ही दूसरोंकी देखादेखी व्यय करनेमें अग्रसर हो जाते हैं. सो इसप्रकारके गृहस्थको कदापि सुख नहिं हो सक्ता. क्योंकि जिस समय विवाहसादी वगैरहमें व्यय करते हैं, उससमय तो सबजने प्रशंसा करते हैं परन्तु दरिद्र हो जानेपर कोई बात भी नहिं पूछता कि अमुक महाशय कहां रहते हैं और उनकी क्या अवस्था है? "दो पैसे सञ्चय करनेसे चिरकाल सुखसे व्यतीत होता है और सब जने निरन्तर आदर सत्कार करते रहते हैं," यह वाक्य सदैव स्मरण रखना चाहिये.

अनेक महाशयोंमें यह दोष है कि—व्यय करते समय स्त्रीकी कुछ भी सम्मति नहिं लेते. अपनी इच्छा व दूसरोंकी उत्तेजनासे खर्च करते रहते हैं. यदि तुम

हिसाबी हो तब तो विशेष हानि नहीं; परन्तु बेहिसाबी होनेपर स्त्रीकी सम्मति पूर्वक ही चलना चाहिये. बलके ऐसी अवस्थामें व्ययका भार स्त्रीके हाथमें ही रखना उचित है. क्योंकि स्त्रियोंके हाथसे सबका सब व्यय हो जानेकी संभावना नहीं है.

अनेक गृहस्थोंकी स्त्रियें भी बेहिसाबी हुवा करतीं हैं. जो वस्तु उत्तम देखतीं हैं, वही खरीदना चाहतीं हैं. दूसरोंके कहे अनुसार ही खर्च करनेमें अच्छा समझतीं हैं. सो इसप्रकारके गृहस्थको धनसंचय होना कठिन है क्योंकि यथेष्ट आय होनेपर भी विचारपूर्वक खर्च करनेपर दरिद्रतासे बचना असंभव है. स्त्री ही घरकी लक्ष्मी व रानी है. स्त्रीका व्यर्थव्यय करनेवाली होना कदापि उचित नहीं है.

अनेक महाशयोंका ऐसा मत है कि स्त्रीके हाथमें पैसा देना किसीप्रकार भी उचित नहीं. क्योंकि स्त्रियें पैसा रखना नहिं जानतीं. व्यर्थ व्यय कर डालतीं हैं अथवा जिसतिसको विश्वास करके वियाजके लोभसे रुपये कर्ज देदेतीं हैं. सो व्याज तो दूर ही रहो असलके अदाँ होनेमें भी कठिनता हो जाती है. सो स्त्रियोंकी यह निंदा सर्वथा मिथ्या नहीं है. अनेक स्त्रियोंमें यह दोष पाया जाता है. उनको चाहिये कि खर्च करनेसे पहिले पति अथवा गुरुजनोंकी परामर्श लेकर काम किया करें. और पुरुषोंको विना पूछे किसीको भी कर्ज देना नाहिं चाहिये. स्त्रियें पैसा रखना नहिं जानतीं, ऐसा समझकर उनके हाथ पैसा नहिं देना उचित नहिं समझा जाता. थोड़ा ही देवो तो कुछ हानि नहीं परन्तु कुछ २ पैसा अवश्य देना चाहिये. यदि नहिं देंगे तो पैसेका मोह किसप्रकार उत्पन्न हो सक्ता है ? और किसप्रकार पैसा इकट्ठा करना चाहिये, यह भी किसप्रकार सीखेंगी ? स्त्रीको अधिक पैसा देनेकी आवश्यकता नहीं है किन्तु उसका निजका खर्च हुये बाद कुछ २ संचय होता रहै, इतना पैसा तो अवश्य ही देना चाहिये.

पति यदि अतिव्ययी (व्यर्थ व खोटे मार्गमें खर्चकरनेवाला) होय तो स्त्रीका कर्तव्य है कि सुयोग मिलते ही पतिके पाससे पैसा लेकर यत्नके साथ संचय करती रहै. और इतनी सावधानीसे संचय करना चाहिये कि जो पतिको उसका बिन्दु-विसर्ग मात्र भी खबर न हो. यदि पतिको मालूम हो जायगा तो वह पैसा कदापि नहिं रहैगा.

कहीं २ ऐसा भी होता है कि—पति यदि धनोपार्जन करनेमें असमर्थ हो जाता है अथवा घोर विपदमें आ पड़ता है तो स्त्रियें अपने पासके पैसेको कदापि खर्च करना नहिं चाहतीं. पतिके कष्ट की तरफ कुछ भी ध्यान नहिं देतीं.

ऐसा कदापि नहिं करना चाहिये. यह कार्य्य निर्दया स्त्रियोंका है. वृद्धा स्त्रियोंमें इसप्रकारकी बहुतसी स्त्रियें देखी जाती हैं.

स्त्रियोंको गहना बनादेनेमें कोई २ पतिगण उजर किया करते हैं. परन्तु अपनी २ अवस्थाके अनुसार तो अवश्य ही बनाना चाहिये. धनसंचय करनेका यह भी एक उत्तम उपाय है. परन्तु अनेक प्रकारके कई १ गहने बनाकर रुपयेको अटकाना भी उचित नहिं दीखता. इसकारण जहांतक बने नकद रुपया व्यापारमें लगाकर वृद्धि करना चाहिये.

आजकल पोष्टाफिसोंमें सेविङ्गस बेङ्क होनेसे धनसञ्चय करनेका अच्छा सुभीता हो गया है. इसमें चार आने भी जमा करा सक्ते हो. जिनके अत्यन्त कम आमदनी है, वे भी कुछ २ पैसा इस व्यांकमें जमा कर सक्ते हैं. स्त्रियोंको चाहिये कि-पतिसे आग्रह करके कुछ २ पैसे इस व्याङ्कमें जमा कराती रहें. 'थोडे पैसेका जमा क्या करना' ऐसा समझकर निषेध नहिं करना. क्योंकि प्रतिमास कमसे कम १) रुपया जमा करनेसे दश वर्षमें प्राय: १२०) रुपये एकत्र हो जाते हैं. थोडा समझ कर जमा नहिं करावोगे तो दश वर्षके बाद तुह्मारे पास एक फुटी कोडी भी कदाचित नहिं निकलेगी.

धनसञ्चयकरनेके लोभमें पड़कर एक दम कृपण भी नहिं हो जाना चाहिये. आवश्यकीय कार्योंमें व्ययोंको नहिं करना अत्यन्त अन्याय है. परिवारमेंसे किसीको कोई रोग हो जाय तो धन खर्चकर चिकित्सा करानेमें त्रुटि करना, अथवा दरिद्र दु:खियोंकी सहायता करनेमें त्रुटि करना व हाथ खींचलेना सिवाय कृपणताके और कुछ भी नहीं है. यदि धनसे किसीका भी उपकार-साधन नहिं हुवा तो उस धनसंग्रहसे लाभ ही क्या !

कोई २ महाशय अपनेको भी वंचित करके तथा किसीका भी उपकार न करके केवलमात्र सन्तानके अर्थ ही धनसंचय करनेमें लगे रहते हैं. सो सन्तानके लिये कुछ २ धन सञ्चय करना बुरा नहीं है. परन्तु अपने आप खाने पीने आदिमें कष्ट सहनकर सञ्चय करना कदापि उचित नहिं समझा जाता.

आमोदप्रमोद.

(५)

सांसारिक कार्य्य सम्पादन करनेमें सभीको अत्यन्त परिश्रम करना पड़ता है. बहुतसे मनुष्योंको तो प्रात:कालसे लगाकर रात्रिको १०-१२ बजेतक विश्राम नहिं मिलता. इसके अतिरिक्त सांसारिक दु:खशोक विपदाओंका भी अभाव नहीं

है. सो जिसप्रकार जीना भी कष्टकर न हो जाय और दुःखमयी संसारमें किंचिन्मात्र भी सुखी हो सके. इसविषयमें स्त्री पुरुष दोनोंको ही उपाय करनेकी अत्यन्त आवश्यकता है. सो **आमोदप्रमोद व रसिकता** इस संसारमें सुखी होनेका एक प्रधान उपाय समझा जाता है. आमोदप्रमोद जीवनको नूतनत्व उत्पन्न कर देता है. आमोदप्रमोदके जितने अधिक उपाय करते रहते हैं, वे ही उतने अधिक सुखसे कालव्यतीत करते रहेंगे. आजकल हमारे देशकी स्त्रियें स्वाधीनतासे अपने पतिके साथ किसीप्रकारका भी आमोदप्रमोद व रसिकता करने नहिं पातीं. जिसका फल यहां देखनेमें आता है कि–हमारे अनेक नवयुवक बाबुगण अपने घरपर सुखकी आशासे निराश हो वेश्यादिकोंके घर जाकर अपना शौख पुरा करते हैं. और मनचाहे गीत नृत्यादि व हास्य परिहास्य करके सुखी होनेको ऐसी जगहैं लाचार होते हैं. इसकारण प्रेमपूर्वक वार्त्तालापोंसे अथवा गीतनृत्यादिसे पतिको रञ्जायमान करना प्रत्येक स्त्रीका कर्त्तव्य है. किसी २ महाशयका ऐसा भी स्वभाव हुवा करता है कि–गृहस्थाचार सम्बंधी वार्तालाप व धर्म और नीति सम्बधी वार्तालापोंके सिवाय स्त्रीके साथ मनोहर वार्तालाप व रसिकता कभी भी नहिं किया करते. इसप्रकारके पति अतिशय सच्चरित्र होने पर भी स्त्रीके मनोऽनुकूल नहिं हो सक्ते.

सदैव प्रसन्नचित्त रहना स्त्रीपुरुष दोनोंका ही परम कर्तव्य है. दुःख और विपदका समय स्मरणकर निरन्तर चिन्तामें ही विताना उचित नहीं. दुःख और विपदको तो भूलजाना ही उचित है. देखो हमारे पूर्वजोंने मरेहुयेके द्वादशदिन पश्चात् मित्रोंको सन्मानपूर्वक मिष्टभोजन कराना व आहारदानादिक देना उन मृत आत्मीय जनोंके वियोग होनेका शोक मिटानेकेलिये ही चलाया था परन्तु वर्तमान समयमें वह कार्य्य पंचायती दण्ड समझकर ऋण लेकरके भी किया जाता है. सो यह आमोद प्रमोद अतिशय अनुचित है. जब आमोद प्रमोद करना सुख होनेका कारण है. तो पतिसे एकान्त समागम होते ही सहास्यवदन हो नाना प्रकारकी बातें व हास्य परिहास्य करना स्त्रियोंका परमकर्तव्य है. स्त्रीका हास्यमुख देखनेसे मनुष्यके हृदयसे अनेक दुःख व शरीरकी थकावट दूर हो जाती है. जो स्त्रियें सर्वथा अरसिका हो, उनको नाटक उपन्यासादिक पढ़कर रसिकता सीखना चाहिये. किसी २ स्त्रीका ऐसा स्वभाव है कि वे पतिके साथ गृहसम्बन्धी वार्तालाप करनेके सिवाय कुछ नहिं जानतीं. वक्तके समय असमय भी नहिं देखती. आफिससे नोकरी करके या दुकानसे परिश्रम करके अथवा और कोई सांसारिक कार्य्योंकेलिये परिश्रम करके आये हो, उस समय लड़ाई

झगड़ेकी बात कहना वा किसी वस्तुका अत्यन्त अभाव होनेके कारण ला देनेको कहना इत्यादि गृहस्थाचारकी बातें कहनेसे कोई भी पति सुखी नहिं हो सक्ता. हे गृहिणीगण ! संक्षेपतया तुमको यही उपदेश दिया जाता है कि–तुम किसी प्रकारकी भी दुःखमय वार्ता पतिके पास मत कहा करो. जिस बातके विना कहे चलता नहीं, वह भी ऐसे समय हँसी २ के साथ कहना चाहिये कि–जिस समय पति अत्यन्त प्रसन्न हो, परिश्रम करकें थके थकाये आये हों अथवा भोजन करते हों, उस समय कोई भी कष्टदायक वार्ता पतिको नहिं कहनी चाहिये.

कोई २ महाशय स्त्रीमें अरसिकता देखकर मन बहलानेकेलिये मित्रोंके साथ तास सतरञ्जादि खेलकर अथवा गाना बजाना व इधरउधरकी गप्पें करकें बाहर ही बाहर अपनी इच्छा पूर्ण करते हैं. इस प्रकार करना अतिशय अन्याय है. स्त्रीको रसिका बनालेनेमें कोई अन्याय नहीं है. उसके साथ तास खेल सक्ते हो, सतरंज खेल सक्ते हो, आनन्दमय वार्तालाप कर सक्ते हो, नाटक उपन्यासादि पढ़कर सुखी हो सक्ते हो. इसप्रकार करनेसे उसके आमोदप्रियता उत्पन्न हो सक्ती है. फिर तुमको कदापि मन बहलानेकेलिये घरसे बाहर जाना नहिं पड़ेगा.

कोई २ महाशय अपने कार्य्योंमें व ज्ञानचर्चामें इतने मग्न रहते हैं कि स्त्रीके साथ घंटेभर भी वार्त्तालाप करना पसन्द नहिं करते. इसप्रकारके व्यवहारसे स्त्रियें अतिशय दुःखित होतीं हैं. इसप्रकार भी सुननेमें आया है कि– ऐसी अवस्थामें रसिका स्त्रियें ज्ञानचर्चा व पुस्तक पढनेमें विघ्न डाल दिया करतीं हैं. पतिके हाथमेंसे पुस्तक छीनकर फेंक दिया करतीं हैं. पतिगण स्त्रीका स्वभाव नहिं समझते, इसकारण ही ऐसा बनता है. स्त्रियें प्रायः आमोदप्रिया व गल्पप्रिया हुवा करतीं हैं, इसबात को स्मरण रखकर पतिगणोंको समझके चलना चाहिये. परन्तु स्त्रीको भी कुछ धैर्य्य होना चाहिये. आमोदप्रमोद अच्छा लगता है, ऐसा समझकर निरन्तर इसीमें मग्न नहिं रहना चाहिये. पुस्तकें पढनेसे पतिकी उन्नति होती है, तो इसप्रकारके वार्त्तालाप व पुस्तकपाठमें कदापि विघ्न नहिं डालना चाहिये. भोजनके पश्चात् व सोते समय आमोदप्रमोद, करने, खेलने, गप्पें करने आदिका नियमित काल रहनेसें किसीको भी कोई हानि नहिं हो सक्ती.

मारवाड़ देशमें प्रायः कई स्त्रियें इकट्ठी होकर रात्रिके समय पतिको रञ्जायमान करनेवाले गीत गाया करतीं हैं. सो यह पुरानी चाल बहुत अच्छी है. परन्तु निर्लज्ज होकर बाजारोंमें अश्लील गालियें गाना, व गुरुजनोंके रहते हुये बहुत ही अप्रकाश्य गीत गाने, सर्वथा अनुचित है.

शृङ्गारकरना.

(६)

पतिपत्नी दोनोंको ही शृङ्गारकी तरफ दृष्टि रखना चाहिये. दोनोंके ही वस्त्र परिस्कार धुलेहुये व केश सुसज्जित होने चाहिये. रूप न होय तो भी वस्त्रोंकी पहरावटसे शोभा हो जाती है. आजकलके युवक युवतीगणोंकी पोशाक विशेषतया मंद नहीं है. परन्तु पुरुषोंको कोट, बूट, पतलूनादि धारण करके अंगरेजोंकी चाल चलना व स्त्रियोंको अतिशय महीन वस्त्रधारणकर वेश्याओंकी चाल चलना कदापि उचित नहीं है. अपने देश कुलानुसार ही उत्तम पोषाक रखना चाहिये. अलंकार (गहना) स्त्रियोंकी सुन्दरता बढ़ानेका प्रधान कारण है. इसी कारण स्त्रियें अलङ्कारप्रिया हुवा करतीं हैं. सो स्त्रियोंको अलङ्कारमें अधिक प्रेम होना कोई हानिकारक नहीं है. क्योंकि पतिको रञ्जायमान करनेकी इच्छासे ही अलङ्कारप्रियता होगई है. सो जिसप्रकारके वस्त्राभूषणसे पति प्रसन्न होय, उसके करनेमें कोई हानि नहीं. परन्तु किसी २ स्त्रीके इतनी अधिक अलङ्कारप्रियता होती है कि— एक ही प्रकारके दो दो तीन तीन अलंकार धारण करके हास्यास्पद हो जातीं हैं. किसप्रकार शोभा नष्ट होती है, इसविषयमें अपनी २ बुद्धिसे विचार करना चाहिये. शरीरको परिस्कार रखना, मनोहर निर्मल वस्त्र धारण करना, अलंकारसे शृङ्गार करना आदि स्त्रियोंका कर्त्तव्य है. केश, तैल फुलेल रहित, सूके, दांत पीले, शरीर मैला दुर्गन्ध मय, कपड़े भी मैले हों तो इसप्रकारकी स्त्रीको पाकर कोई भी पति सुखी नहिं हो सक्ता. मनोहर वस्त्रालंकार सहित स्त्री ही घरकी लक्ष्मी है सो स्त्रियोंको ध्यानमें रखना चाहिये.

कोई २ महाशय इतने उदासीन रूप होते हैं कि—शृङ्गार करना, उनको अच्छा नहिं लगता. सो यह उचित नहिं दीखता. क्योंकि शृङ्गार रहित होना, व निर्मलता रहित वस्त्रादिकका होना स्त्रियोंको प्रिय नहिं लगता. स्त्रीपुरुष दोनों ही शृङ्गारप्रिय होते हैं परन्तु पुरुषोंकी अपेक्षा स्त्रियें अधिक हैं. शृङ्गारप्रियताका स्वभाव किसीप्रकार बुरा नहीं कहा जा सक्ता. इसप्रकार होनेसे ही परस्पर अतिशय प्रीति रहती है और पृथिवीका सौन्दर्य्य भी बढ़ता है.

सांसारिक कार्य्य सम्पादन होनेके पश्चात् प्रत्येक स्त्रीको अच्छे कपड़े पहनकर सुसज्जित होना चाहिये. परन्तु इतना अधिक शृङ्गार नहिं होना चाहिये जो गुरुजनोंके मनको बुरा लगै. कोई २ महाशय कहते हैं कि— प्रतिदिन शृङ्गारित रहनेसे व पतिको दिखानेसे क्या फल? सो फल यही है कि— पतिका चित्त प्रसन्न रहता है. और उसका दिनोंदिन अनुराग बढ़ता है. वेश्यादिकोंमें मन

चलायमान नहिं होने पाता. इसप्रकार सामान्य यत्नसे कोन स्त्री है जो अपने पतिको प्रसन्न न रक्खै ?

तेल फुलेल अत्तर आदिक सुगंधित द्रव्योंका व्यवहार करना भी दूषणीय नहीं है किन्तु प्रीतिकर ही है. नयी रोशनीवाले बाबुगण आजकल प्रायः फुलेल, तैल, लवेन्डर, अत्तर, पमेटम, साबन आदिक सुगंधित द्रव्य व्यवहार करने लगे हैं परन्तु विलायती साबन वगेरह चरबीआदि अपवित्र वस्तुओंके संयोगसे बनती हैं. उनको व्यवहारमें लाना अतिशय अन्याय है. अपने देशकी बनी हुई पवित्र साबुन वगैरह भी बहुतायतसे मिलते हैं, उनका ही सबको व्यवहार करना चाहिये. इसविषयमें विशेष लिखनेकी कोई आवश्यकता नहीं है कि- अनेक नवयुवक बाबुगण अपनी आमदनी प्रायः शृङ्गार करनेमें ही व्यय करने लग गये. सो ऐसा करना अतिशय अनुचित है. अपनी आय देखकर व्यय करना ही बुद्धिमानोंका काम है.

किसी २ स्त्रीको इतनी शृङ्गारप्रियता होती है कि उसकेलिये पतिको कष्ट सहना पड़ता है. जिस शृङ्गारसे पतिको सुखी करना है, उस शृङ्गारकी वस्तुयें मगानेकेलिये पतिको कष्ट देना किसी भी स्त्रीका उचित कार्य्य नहिं समझा जाता. पतिकी अवस्था व आमदनी देखकर शृङ्गारकी सामिग्री मगाकर आवदार बनना बुद्धिमती सुशीला स्त्रियोंका कर्तव्य है.

गृहकार्य्य.

(७)

स्त्रियोंको समस्त कार्य्य अपने हाथसे ही करने चाहिये. जिन धनाढ्योंके दासदासी व रसोईदार हैं, उनको भी अपने आप स्वयं उपस्थित रहकर समस्त कार्य्योंकी देखरेख करनी चाहिये. क्योंकि नोकरोंके भरोसेपर ही छोड़ देनेसे अनेक कार्य्य अपने मनोऽनुकूल नहिं होते. यदि हो भी जाय तो उसमें बहुत कुछ हानि होती है. दूसरे दासदासी व रसोईदारके हाथसे अनेक पदार्थ विगड़ जाते हैं और चोरीमें भी जाते हैं. सो सब कोई भलेप्रकार जानते हैं. मध्यम अवस्थावाले गृहस्थोंको समस्त कार्य्य अपने हाथसे ही करने चाहिये. थोड़ी आमदनीमें विचारपूर्वक खर्च न किया जाय तो काम चलना कठिन हो जाता है. क्योंकि आजकल अनेक प्रकारके नये २ खर्च बढ गये हैं. जिससे दो सौ रुपये मासिक आय होनेपर भी कुछ नहिं बचता. इसप्रकारकी आमदनीवालोंके दासदासीका खर्च प्रायः २५) रु० मासिक रहा करता है परन्तु जिनकी आ-

मदनी पचीस रुपयेसे पचास रुपये तककी है उनको ५) रु० मासिकसे अधिक दासदासीका खर्च कदापि नहिं रखना चाहिये.

नयी रोशनीवाले बाबुलोग प्रायः गृहकार्य्य करनेमें अतिशय उदासीन रहते हैं. अपने हाथसे बाजारमें जाकर शाक सबजी खरीदकर लानेमें भी उनको दिनोदिन घृणा और आलस्य उत्पन्न होने लगा. इसीकारण उनकी थोड़ीसी आय अनेक प्रकारके व्यर्थव्ययोंमें ही पूरी हो जाती है. अनेक बाबुगण ऋणी भी हो जाते हैं. सो हमारे नवयुवक बाबुगण अवकाशके समय तास, चोसर, सतरञ्ज खेलने आदिमें विताते हैं. किंतु गृहकार्य्यमें अपना मन सर्वथा नहिं लगाते सो उचित नहीं है. यदि वे कुछ २ सांसारिक कार्य्य अपने हाथसे सम्पादन कर लिया करें तो पैसे भी बच सक्ते हैं और गृहकार्य्य भी उत्तम रीतिसे सम्पादन हो सक्ते हैं. हे नवयुवक बाबु महाशयो! तुमारे पिता पितामहादि गृहकार्य्य सम्पादन करनेमें लज्जा न समझ समस्त कार्य्य अपने हाथसे ही किया करते थे; यही तो कारण है कि वे थोड़ीसी आयमें भी सुखके साथ दिन विताते थे. अपने घरके कार्य्य करनेमें लज्जा कैसी? स्वयं कार्य्य करनेसे समस्त कार्य्य भी अच्छे होंयगे. व्यर्थव्ययसे भी बचे रहोगे. और शारीरिक परिश्रम करनेसे शरीर नीरोग व बलिष्ट रहनेके अतिरिक्त चित्तकी प्रसन्नता भी वृद्धिरूप रहैगी.

आजकल प्रायः युवती स्त्रियोंको भी गृहकार्य्य करनेमें आलस्य व घृणा उत्पन्न होने लगी. और अमीरोंकी पुत्रियोंका तो पछो ही मत; वे तो यथा समय उठकर भोजनपान करनेमें भी कष्ट समझा करतीं हैं. बहुतसी अर्द्धवयसी गृहिणीगणोंको भी अपने हाथसे रसोई बनाने, घर नीपने बलके अपनी झूटी थालीतक मांजनेमें भी कष्ट होने लगा. सो हे गृहिणीगणो! तुमको समर्थ होने-पर भी अस्थिचर्म मात्र है शरीर जिनके ऐसी वृद्धसास व माता आदिके शि-रपर समस्त गृहकार्य्यका भार रखदेनेमें लज्जा व दया नहिं आती? हाय! कैसे कष्टकी बात है कि जो सास वृद्धावस्थामें तुमारी सेवा टहलसे शेषके दिन सुखमें वितानेकी आशा करती थी, उसे आज भलेप्रकार तुमारी सेवा टहल नहिं बननेसे तुम रुष्ट हो जाती हो? और अनेक प्रकारके कुवचन कहकर उनका हृदय जलाती हो? प्रियबहनो! इसप्रकार करना तुमको कदापि उचित नहीं है. इसमें तुमको किसीप्रकार भी लाभ नहीं है. गृहकार्य्योंमें तुम असमर्थ हुई जाती हो, आलस्य करनेसे रुग्ण हुई जाती हो सो यह कदापि योग्य नहीं है. क्योंकि प्रथम तो तुम लोग हमेशह घरमें ही रहा करती हो, बाहर जाकर हवा खाने वा सैर करने आदि किसीप्रकार भी शारीरिक श्रम नहिं करने पाती. फिर गृहकार्य्योंसे

भी विमुख हो जाओगी तो सर्वप्रकारसे रुग्न हो, फिर किसी कामकी भी नहिं रहोगी. तुमारी सन्तान भी रोगी व निर्बल उत्पन्न होयगी. वैद्यकशास्त्रका वाक्य है कि "राजाकी रानी हो अथवा भिखारनी हो परिश्रम नहिं करनेसे किसीप्रकार भी नीरोग व सुखी नहिं हो सक्ती."

गृहिणी गण ! तुम समस्त गृहकार्य्य अपने हाथसे ही किया करो. नोकर नोकरानी हों तो बाहरके कितने एक कार्य्य उनके द्वारा करा सक्ती हो परन्तु रसोई बनाना, घरकी समस्त वस्तुयें यथास्थान सावधानीसे रखना, बालकोंको भोजनादि देना, व उनकी रक्षाका उपाय करना ये सब काम अपने हाथसे ही किया करो. इस प्रकारके कार्य्य करनेमें क्या कष्ट होता है ? कदापि नहीं. ऐसे सुखका कार्य्य कोई भी नहीं है जो अपने हाथसे स्वादिष्ट भोजन तय्यार कर पति पुत्र सास श्वसुर देवर जेठ व अन्यान्य परिवारवर्गको तृप्तिकर सुखकी वृद्धि करता हो ? इससे अधिक और कोई सुख है ? घरकी सामग्री भलेप्रकार यथास्थान रखकर घरकी शोभा बढ़ाना क्या सामान्य सुख है ?

यद्यपि रसोई करना, सन्तानप्रतिपालन करना, गृहिणीका कार्य्य है, परन्तु उसकी अस्वस्थता होनेपर इन कार्य्योंके करनेमें लज्जा आदि करना पुरुषोंको भी उचित नहीं समझा जाता. क्योंकि असमर्थ अवस्थामें पतिका कार्य्य स्त्री व स्त्री का कार्य्य पतिको अवश्य ही करना चाहिये.

परिवारसे हिलमिलकर रहना.

(८)

समस्त परिवारको मिलकर रहनेमें अनेक सुख है. क्योंकि हम लोगोंमें अनेकोंकी आय बहुत ही कम है. पृथक् २ घर करनेमें उस आयसे काम नहिं चल सक्ता. गृहकार्य्य व सन्तानपालन एक स्त्रीकेद्वारा भलेप्रकार कदापि नहीं हो सक्ता. इसकारण दासदासी रखनेकी आवश्यकता होती है. सो अल्प आयवाले दासदासी रखनेमें असमर्थ रहते हैं. इसकारण भाई २ मिलकर रहनेसे गृहके समस्त कार्य्य व बालकोंका पालनपोषण व रोगशोक आपद विपद आदि समस्त विषयोंमें सहायता होनेसे सुखसे दिन कट जाते हैं. सब जने मिलकर रहनेमें कितने ही दोष हों तो भी आजकल की अवस्थामें एकत्र रहनेमें ही अनेक लाभ हैं. अतएव भाई २ जुदे न होकर एक ही रसोईमें जीमते रहें. इस विषयमें गृहस्थी व गृहिणी मात्रको उपाय करना चाहिये.

स्त्रियोंका इसप्रकार अपवाद है कि– परिवारभङ्गका मूलकारण स्त्रियें ही हैं. स्त्रियोंकी कुमन्त्रणासे ही भाई भाईमें मनोवाद हो जाता है और अन्तमें जुदा घर करना पड़ता है. यह बात सर्वथा मिथ्या नहीं है. क्योंकि एक भाई दूसरेका आज्ञाकारी होकर रह सक्ता है. तथा एक भाई दूसरेको सुखी व उन्नत देखकर सुखी हो सक्ता है. परन्तु देवरानी जिठानीयोंमेंसे एक दूसरीकी आज्ञाकारिणी बनकर रहना कोई भी नहिं चाहतीं और न एक दूसरीका सुख ही देख सक्ती है. एक दूसरीकी अधिक शोभासे अतिशय दुःखिता रहतीं हैं. इसी कारण वे परस्पर एक दूसरीके दोष ढूंढती रहती हैं. और छोटेसे छोटे दोषको बहुत बडा करकें अपने २ पतिके कानोंमें डालतीं रहतीं हैं. इसप्रकार सदैव करती रहनेसे कभी न कभी अवश्य ही कलह हो जाता है. सो हे **गृहिणीगण!** तुमको जिसप्रकार बने यत्न करकें यह कुअभ्यास छोडदेना ही उचित है. एक भाई जिसप्रकार दूसरे भाईको पर नहिं समझता, उसप्रकार तुमको भी उचित है कि– अपनी देवरानी जिठानीको अपनी माजायी बहनसे भी अधिक समझो, यदि विचार किया जाय तो देवरानी जिठानी सगी बहनसे भी अधिक हैं; क्योंकि–सगी बहनका तो कभी न कभी अवश्य ही वियोग हो जाता है. परन्तु देवरानी जिठानीका वियोग होना कठिन है. इनसे तुमारा उमर भरकेलिये सम्बन्ध हो गया है; लड़ाई करो, चाहे झगड़ा करो, देवरानी जिठानी तो तुमारी एक वंशीया ही रहेंगी और जन्मभर उनके साथ रहे विना कदापि कोई काम नहिं चल सकेगा.

स्त्रीजाति सहिष्णुतागुणके कारण अति प्रसिद्ध है. परन्तु परिवारके दशजनोंकी दश बातें सुनकर सहलेना तथा अपनी हानिको भी स्वीकार करकें सबके साथ एकत्र रह सको तो निःसंदेह तुम सहिष्णुतागुणकी धारण करनेवाली हो. **गृहिणीगण !** परिवारके समस्तजनोंकी प्रियपात्री बननेकेलिये हमेशह यत्न करना चाहिये, कोई किसी प्रकारका कटुक वचन कहे तो उसको हृदयमें नहिं रखनाकर भूलजाना ही उचित है. परिवारमेंसे किसीके हाथसे तुमारी कोई वस्तु नष्ट हो जाय तो जिसप्रकार बने क्षमा कर देना चाहिये. उसकेलिये कदापि लड़ाई झगड़ा नहिं करना चाहिये. परिवारके लोगोंमेंसे किसीकी भी निन्दा नहिं करना. अन्य कोई तुमारे पास निन्दा करे तो तुम कदापि मत सुनो, क्योंकि इसप्रकार करनेसे शीघ्र ही परस्परकी प्रीति नष्ट हो जाती है.

पुरुषोंको भी इस विषयमें सावधान रहना चाहिये. यदि स्त्री, परिवारमेंसे किसीका दोष तुमारे निकट प्रगट करे तो उसका विश्वास कदापि नहिं करना

और न उसमें सहायता ही देना चाहिये. हां स्त्रीकी समस्त बातें अवश्य ही सुन-लेना चाहिये परन्तु सुनेबाद यदि स्त्रीकी भूल समझो तो उसको समझा दिया करो. यदि स्त्रीकी बात सच्ची समझो तो स्त्रीको धीरज देना और उसके दुःखमें दुःखित होना चाहिये. वह जिसप्रकार सहन करके रह सके, उसी प्रकार उपदेश देना चाहिये. और जो दुःखकी बात स्त्रीने कही हो, उसको भी दूर करनेका उपाय करना चाहिये. कोई २ पति, स्त्रीकी बात सर्वथा सुनते ही नहीं. परन्तु इसप्रकार करनेमें सिवाय हानिके कोई लाभ नहिं दीखता. क्योंकि किसीके निकट मनकी बात नहिं कहनेसे उसको समझाना व उपदेश देना कदापि नहिं बन सक्ता. इसप्रकार होनेसे स्त्री मानसिक दुःखसे दुःखित हो अंतमें किसीका भी उपदेश ग्रहण नहिं करती. इसप्रकार भी देखनेमें आया है कि किसी २ स्त्रीने मानसिक दुःखकी बात पतिके निकट कही और पतिने सुनी अन सुनी करके उल्टा तिरस्कार किया तो वह स्त्री अपने जीवनको भी तुच्छ समझ विषादिकसे आत्मघात कर डालती है. अथवा गृहत्यागकर किसी अन्यके साथ भाग जाती है. इसलिये स्त्रीका दुःख अवश्य सुनना चाहिये.

स्त्रीकी कही हुई बातका यथार्थ जाननेकेलिये किसीसे पूछताछ करो तो ऐसी सावधानीसे किया करो कि–जिससे परिवारके लोगोंको ऐसा भास न हो जाय कि–तुम स्त्रीकी पक्ष कर रहे हो. यदि ऐसा करोगे तो वह दोष तुम कदापि दूर नहिं कर सकोगे. न्यायदृष्टिसे विचारनेपर यदि स्त्रीका कहना सत्य समझा जाय और मातापितादि गुरुजनोंका दोष समझा जाय तो स्त्रीके न होते हुये उस बातकेलिये असन्तोष प्रकाश करना चाहिये और स्त्रीको गुप्तभावसे धैर्य्य देकर समझाना व उस दोषको भूलजानेका उपदेश देना चाहिये. और स्त्रीका ही यदि उस दोषकी जड़ समझो तो स्त्रीका ही तिरस्कार करना चाहिये. दासदासी व लघु सम्बंधवालोंमेंसे कोई मूल कारण होय तो उसके सत्यासत्यका निर्णय गुप्तभावसे मालूम करना चाहिये. यदि स्त्रीका दोष समझो तो दासदासी के सन्मुख न होनेपर एकान्तमें स्त्रीका तिरस्कार करना चाहिये. यदि दास-दासीका ही समझो तो उनको छोड देना ही उचित है. और लघुसम्पर्कीयजनों-मेंसे किसीका दोष समझो तो उसको वह दोष समझाकर सचेत कर देना चाहिये.

बहुतसी स्त्रियें अपने पतिके सिवाय परिवारके अन्य जनोंके सुखदुःखकी तरफ ध्यान ही नहिं देतीं. सो इसप्रकार करना अतिशय अज्ञानताका कारण है. इसप्रकार करनेसे सबकी प्यारी कदापि नहिं बन सक्तीं. ऐसी अवस्थामें एकता कदापि नहिं रह सक्ती. गुरुजनोंको (सास, ससुर, जेठ, जिठानी आदिको)

कोई भी भारी काम नहिं करने देना. उनके खिलाने पिलानेमें विशेष दृष्टि रखनी चाहिये.

देवर जेठको अपने भाईसे भी अधिक समझना चाहिये. वस्तुतः (हकीकतमें) देखा जाय तो देवर जेठ तुमारे भाईसे भी अधिक हैं. क्योंकि-भाई तो भांरें २ पर हो जाते हैं परन्तु देवर जेठ कदापि पर नहिं होते. देवर जेठके बालकोंको अपने बालकोंकी सदृश ही प्रेम करना चाहिये. दासदासीपर दया व ममता रखना चाहिये. यदि विचार किया जाय तो दासदासीके तुम ही माता पिता हो. क्योंकि अपनी उमरके बहुतसे दिन वे तुमारी सेवामें ही बिताते हैं. सो उनके खानेपीनेमें किसी प्रकारकी त्रुटि नहिं होना चाहिये. उनके दुःखमें दुःखित हो यथाशक्ति सहायता भी करना चाहिये. उनके किसी कार्यमें त्रुटि देखो तो निष्ठुरताके साथ गाली गुस्सा न देकर अपने बालकोंसे जिसप्रकार व्यवहार करती हो, उसी प्रकार करना चाहिये. परिवारके लघुसम्बन्धीय लोगोंमेंसे किसीका भी अन्यायाचरण देखो तो शासन करनेमें संकोच नहिं करना. 'इनसे प्यार ही करना चाहिये,' ऐसा समझकर शासनका अभाव नहिं होना चाहिये. उचित (न्याय) मार्गमें रहकर प्रीति व शासन करनेसे परिवारमें अशान्ति नहिं हो सक्ती. ननद भुवासास मौसीसास आदिमेंसे कोई स्त्री हमेशहकेलिये तुमारे ही घर रहकर दिन काटती हो तो परिवारके अन्य जनोंकी अपेक्षा इनकी सेवा व परिचर्या अधिक किया करो. तुमारे अपराधसे इनके मनमें " क्या किया जाय, परके घर रहते हैं " ऐसी बात कदापि नहिं आनी चाहिये.

पुरुषोंको भी इस विषयमें सावधान रहना चाहिये. बहुतसे महाशय इन सब आत्मीयजनोंसे विशेष ममता नहिं रखते. इनके सुखदुःखकी तरफ कुछ भी ध्यान नहिं देते. सो ऐसा कदापि नहिं होना चाहिये. क्योंकि जब ये लोग तुमारे ही आश्रित होके रहते हैं तो असद्व्यवहारोंसे इनको असन्तुष्टकरनेसे कुटुम्ब-विरोध हो जानेकी पूर्णतया संभावना है.

देवर जेठमेंसे कोई धनोपार्जन करनेमें असमर्थ होय तो उनका अनादर अथवा उस बातकी चर्चा कदापि नहिं करनी चाहिये क्योंकि-इसप्रकार करनेसे उनको व विशेषतया उनकी स्त्रियोंको अतिशय कष्ट होता है. और इसप्रकार करनेसे एकत्रवास (हेलमेलसे रहना) भी नहिं हो सक्ता. आहार, वस्त्र, आभूषण सबमें समानता होनी चाहिये. एक परिवारमें किसीको बुरा, किसीको अधिक गहना, किसीको थोडा इसप्रकारके व्यवहार होनेसे घरमें कदापि सुख व

सम्पत्ति (एकता) नहिं हो सक्ती. इसप्रकार करना अत्यन्त निष्ठुरहृदयका काम है. क्योंकि जिस देवरानी जिठानीको अपनी सगी बहनकी समान समझती और प्यार करती हो उसके सन्मुख अपनी शोभा बढ़ानेकी चेष्टा करना क्या अतिशय नीचताका कार्य्य नहीं है ? सामर्थ्य होय तो सबको ही वस्त्राभूषण एकसा करना चाहिये. अपने आप अकेले पांचसौका गहना न पहन कर पांचजनी सौ सौ रुपयेका गहना पहरोगी तब ही घरकी शोभा व तमारा सदाचार समझा जायगा. परन्तु तुम लोगोंमेंसे किसीको पतिके साथ विदेशमें रहना पड़े तो उसको दो चार गहने अधिक होनेमें कोई हानि नहीं है किन्तु घरकी शोभा ही है. भाईयोंमेंसे जो विदेशमें रहै और उसका बडे लोगोंमें जाना आना रहै तो उसकी अच्छी पोशाक होनेमें जिसप्रकार कोई भाई दुःखित नहिं होता, उसीप्रकार तुम भी परदेशमें रहनेवाली देवरानी वा जिठानीको अधिक गहनेवाली देखकर दुःखित मत होओ.

सन्तान पालन.

(१)

सन्तान पारिवारिक सुखका प्रधान उपाय और वृद्धा अवस्थामें सुखकी प्राप्ति होनेका एकमात्र कारण समझा जाता है. परन्तु प्रथम स्त्रीके सन्तानोत्पत्ति न होय तो उसकी प्राप्तिकेलिये दूसरा विवाह करना कदापि उचित नहीं. यद्यपि स्त्रीके वन्ध्या होनेपर दूसरा विवाह करनेसे सन्तानोत्पत्ति हो सक्ती है. परन्तु दो स्त्रियोंको लेकर सांसारिक सुखानुभव करनेमें जो कष्ट भोगने पड़ते हैं, उनकी अपेक्षा निःसन्तान रहनेमें शतांश भी दुःख नहीं है. इसकारण द्वितीय विवाह करनेसे सिवाय हानिके कुछ भी लाभ नहीं है. यदि सन्तानके उत्पन्न न होनेसे अपनेको अत्यन्त दुःखी समझते हो तो दत्तकपुत्र (गोद) ले लेना अच्छा है. जिससे कि सर्वप्रकारसे बचे रहोगे. परन्तु तुमारे पास धन सम्पत्ति अधिक होनेके कारण उसका अधिकारी मात्र बनानेकेलिये अथवा अपने नाम व वंशपरंपराय रहनेकेलिये दत्तकपुत्र भी लेना उचित नहिं समझा जाता. क्योंकि तुमारे मरे पीछे तुमारा नाम अच्छा चलता है या बुरा ? अथवा तुमारा वंश चलता है कि नहीं ? सो तुम देखनेको नहिं आते. आजकल यही देखनेमें आता है कि जिसको विना परिश्रमके धनकी प्राप्ति हो जाती है, वे बहुधा व्यभिचारी जुआरी होकर अन्याय मार्गमें सब धन उडाकर पिताका तो क्या दादे पड़दादे तकका नाम बदनाम कर देते हैं. ऐसे लड़कोंसे वंशका नाम

किसप्रकार रह सक्ता है ? हमारी समझमें तो यदि भाई भतीजा कोई सदाचारी उत्तराधिकारी हो तो उनको कुमाके खानेलायक धनका पति करके शेषकी सम्पति अपने देश व अपनी जातिके हितसाधनार्थ अपने नामकी संस्कृत पाठशाला, अथवा औषधालय व पुस्तकालय वा छात्रवृत्ति देने आदि चिरस्थायी पुण्य कार्य्यमें लगा जावो. जिससे सैंकड़ों वर्षोंतक तुमारा नाम व यश रहै. और महत्पुण्यकी प्राप्तिसे तुमारी आत्माका भी कल्याण व सुगति हो और स्वदेश व स्वजातिका भी उत्तरोत्तर परम कल्याण होता रहै. भला ऐसा कौन मूर्ख है जो ऐसे सर्वोत्तम कार्य्यमें सम्पति न देकर दूसरेके हवाले करके अपना नाम बदनाम करावे ?

कहीं कहीं ऐसा भी देखनेमें आया है कि, कोई २ वन्ध्या स्त्री व मृतवत्सा स्त्री अपने आप आग्रह करके पतिका दूसरा विवाह करा देती हैं. इस कार्य्यके करानेमें स्त्रीका पतिमें पूर्णतया प्रेम प्रगट होता है. परन्तु पति यदि द्वितीय विवाह करले तो उसका स्त्रीमें अतिशय अप्रेमपणा प्रगट हो जाता है.

सन्तान, पिता माताका प्रियतम पात्र है; सो सत्य है किन्तु वह किन २ उपायोंसे बलिष्ट व निरोगी और सुशिक्षित हो सक्ता है. इस विषयमें अनेक स्त्रीपुरुष ध्यान नहिं देते. सो ठीक नहीं है. सन्तानोत्पादन, सन्तानपालन और सन्तान शिक्षा आदिक विषयके ग्रन्थ (पुस्तक) समस्त मातापिताओंको विचारपूर्वक पढ़ना चाहिये. यहांपर इसविषयमें कुछ लिखा भी जाता है कि—

मातापिताके शारीरिक व मानसिक गुण बहुधाकर सन्तानमें पाये जाते हैं. इसकारण समस्त स्त्रीपुरुषोंको सुशील व सदाचारी व निरोगी होनेका उपाय करना अत्यन्त आवश्यकीय कार्य्य है. कुष्ट, शूल, यक्ष्मा, आदिक रुग्न अवस्थामें सन्तानोत्पादन करना सम्पूर्णतया अनुचित है. पितामाताकी निरोग अवस्थामें जो सन्तान होता है, उसीका बलिष्ट व दीर्घजीवी होना संभव है.

सन्तान प्रतिपालनका भार माताके ही हाथमें होना चाहिये गृहकार्य्योंका भार दासदासी व अन्यके हाथ दिया जा सक्ता है. परन्तु प्राणोंसे भी प्रियसन्तानके प्रतिपालनका काम दासदासीके हाथमें देना अतिशय मूर्खता व निर्दयताका कार्य्य है. दासदासी आदि परिश्रमसे बचनेकेलिये तुमारे बालकोंके मलमूत्रमय कपड़े व सोनेकी गद्दी वगेरह प्रतिदिन आवश्यकतानुसार दो तीन बार नहिं धोवैंगे. उपयुक्त समय दुग्धपानादिक भी नहिं करावैंगे. कोई २ माता ऐसी निर्दया होती है कि बहुत छोटे बच्चेको भी रात्रिभर दासीके पास रख छोडती है. उसके रोने व भोजनपानमें कुछ भी दृष्टि नहिं रखती.

आजकल प्रायः सन्तानकी रक्षा करनेके (खिलानेके) लिये दास व दासी रखा करते हैं सो इसप्रकार करना अतिशय अनुचित है. बहुधा देखनेमें आता है कि, दासदासी बालकको लेकर घरके बाहर चली जाती हैं सो बालकको कहीं डालकर या तो किसीसे गप्पें करने लग जाती हैं अथवा सुखसे निद्रा लेती हैं. बालक रोता है तो उसकी तरफ कुछ भी ख्याल नहीं करतीं. मूर्ख माता पिता इस बातकी कुछ भी नहिं जानते. इसकारण गृहस्थके हजार कार्य्य नष्ट हो जांय तो भी सन्तानकी रक्षा व पालनपोषण करनेका काम माताको अपने ही हाथमें रखना चाहिये. दूसरी हानि यह है कि, बच्चे छोटी उमरसे ही शिक्षाग्रहण करते रहते हैं सो अनपढ़ और असदाचारी दासदासीके उपरि इनकी रक्षाका भार होनेपर बालक उनकेसे छोटे २ वचनालाप व असद्चरित्र सीख जाते हैं.

सन्तानको सदाचारी व विद्वान् बनाना होय तो पति व पत्नी दोनोंको ही सदाचारी व सुशिक्षित होनेकी अत्यन्त आवश्यकता है. क्योंकि बालक माता-पिताको जैसा करते देखैंगे वैसा ही करने लग जाते हैं. पांचवर्षकी उमर होनेपर बालकोंको विद्यारम्भ कराना अच्छा है किन्तु वे अतिशय दुर्बल व रोगी होय तो आठदशवर्षसे जियादा वे पढे नहिं रहने देना. पढ़ानेकेलिये किसी प्रकारका भय नहिं दिखाना चाहिये अथवा मारना पीटना भी नहिं चाहिये. ऐसा होनेसे बालकोंकी लिखने पढनेसे अरुचि हो जाती है. तथा हरसमय भयभीत रहनेसे मुझे याद नहिं होगा तो गुरुजी व मातापिता फिर भी कलकी तरहँ मारेंगे इत्यादि भयसे बालकोंको कदापि अभ्यास नहिं हो सक्ता. क्योंकि जिस हृदयसे शिक्षा ग्रहण की जाती है, वह हृदय तो निरन्तर भयसे परिपूरित रहता है. इसकारण निष्ठुर पाठकके निकट बालकोंको पढनेके लिये कदापि नहिं भेजना चाहिये. किन्तु जो पाठक बालकको मीठी २ बातोंसे ललचाकर अपने वशीभूत व आज्ञाकारी बना सकें, उसीके पास बालकोंको पढाना चाहिये. यदि निष्ठुर पाठकके पास ही भेजना पड़े तो उसको मारने पीटनेका निषेध करदेना चाहिये. दशबारह वर्षकी उमर पर्य्यंत तो बालकोंको मातृभाषामें ही नीति शिक्षा व धार्मिकशिक्षा देनी चाहिये. तत्पश्चात् पुत्रोंको अंगरेजी आदिक राजविद्या व व्यापारी विद्या पढ़ाना चाहिये. परन्तु ऐसी कोई भी विद्या नहिं पढ़ाना चाहिये जो कि सिवाय सरकारी नोकरीके व्यापारादिक करनेमें उपयोगी न हो. कन्याओंको गृहस्थाचार गृहचिकित्सा व गणित तथा धर्मशास्त्र व शिल्पकार्य्यकी शिक्षा देनी चाहिये. कन्याओंके पढ़ानेका भार पुरुषशिक्षकके हाथमें नहिं देना

चाहिये. यदि स्त्री पाठिका नहिं मिलै तो ९ वर्षसे अधिक वयवाली कन्याके पढानेका भार पुरुषशिक्षकके हाथ कदापि नहिं देना चाहिये. ऐसी अवस्थामें भाई भतीजा चाचा (काका) आदिकेद्वारा पढ़ानेकी योग्यता मिल जाय तो अच्छा है नहीं तो विवाह हुये बाद अपने पति व देवर आदिसे पढ लिया करेंगी. कोई २ महाशय कन्याको पढानेकेलियं बहुतसा व्यय व यत्न नहिं करते, सो यह उचित नहीं. हर्षका स्थान है कि हमारे नवयुवक बाबुगण पुत्रकी समान कन्याओंको भी प्रेम करने लगे यद्यपि विचार किया जाय तो कन्याकी अपेक्षा पुत्र उपकारी है. परन्तु फलाफल देखकर न्यूनाधिक प्रेम करना स्वार्थपरताका ही काम है. कोई तो कन्या और जमाईकेद्वारा भी पुत्रहीन मातापिता सुखसे दिन काटते हैं.

पुत्रका विद्याभ्यास पूराहुये विना व बीस वर्षकी उमर हुये विना उसका विवाह कदापि नहिं करना चाहिये. हम लोगोंमें अनेकोंका बाल्यविवाह होनेसे विद्याशिक्षा व शारीरिकबलमें अत्यन्त हानि होती है. क्यों कि–विद्याभ्यासके समय विवाह करदेनेसे पुत्र अतिशय बुद्धिमान होनेपर भी प्रेमकी अनिवार्य्य चिंताके कारण पढ़नेमें मन नहिं लगा सक्ता. किन्तु दुश्चरित्र अथवा स्वच्छन्द हो जानेका अवसर आजाय तो उसका विवाह कर देनेमें विलम्ब भी नहिं करना चाहिये. क्योंकि फिर विलम्ब करनेसे सिवाय हानिके कोई लाभ नहिं हो सक्ता.

कन्याका विवाह १२ वर्षकी उमरसे पहिले कर देना उचित नहीं. उसकी शारीरिक अवस्था देख करके भी चलना चाहिये क्योंकि किसी २ कन्याको दश वर्षकी उमर होनेपर भी विवाह करदेनेकी आवश्यकता होती है और किसी २ कन्याको १५–१६ वर्षपर्य्यन्त कवाँरी रख सक्ते हैं. वर, कन्यासे कमसे कम १० वर्ष और अधिकसे अधिक १५ वर्ष बड़ा होना चाहिये. अत्यन्त खेदका स्थान है कि कोई २ निष्ठुर मातापिता धनके लोभमें वशीभूत होकर अथवा कन्याको अन्नवस्त्रका कष्ट नहिं होगा, इस अभिप्रायसे तथा वंश गौरवकी वृद्धिकेलिये उच्चपदधारी, धनवान् विद्यावान् व खानदानी देखकर ५०–६० वर्षके वृद्धको भी द्वादशी वर्षीया कन्याका विवाह कर देते हैं. इतने वर्षकी छोट बड़ाई होनेसे कन्याके मनका भाव व इच्छा तथा वरके साथ एकता कदापि नहिं हो सक्ती. इससे प्रणयका उत्पन्न होना भी अत्यन्त असंभव है. विवाहका प्रधान उद्देश्य प्रणय है. खाना पहरना नहीं है. इससे बड़ी भारी हानि और शोककी बात यह है कि ऐसे वृद्धविवाहोंसे ही अनेक सुकुमार बालिकायें चिरकाल वैधव्ययन्त्रणा भोगा करतीं हैं. इसलिये वृद्धके साथ विवाह करना अतिशय निन्दनीय है. हर्षका

स्थान है कि आजकल ऐसे वे जोड़के विवाहसे अनेक स्त्री पुरुषोंको घृणा उत्पन्न होने लगी.

वियोग.

(१०)

वियोग–यन्त्रणा अतिशय कष्टदायक होती है. वृद्धदम्पती भी पृथक् २ रहनेमे अतिशय दुःखित होते हैं. बहुतकालपर्यन्त वियोग होनेसे अनेक युवकयुवतीगण अतिशय दुर्बल व भयानक रोगसे ग्रसित हो जाते हैं. मस्तक घूमना मूर्च्छा आ जाना, आदि कठिन २ रोग दीर्घविरहका ही फल है. और यह भी देखनेमें आता है कि, अनेक युवकयुवतीगण दीर्घविरहके कारण कुपथगामी (व्यभिचारी) भी हो जाते हैं. क्योंकि दीर्घविरहसे दाम्पत्यप्रेम क्रम २ से हीन हो जाता है.

आजकल दीर्घविरहका विषमयफल अनेक महाशय समझ भी गये हैं. देखनेमें आता है कि जिसको १५) रु० मासिक आय है, वह भी अपनी प्रियपत्नीको परदेश लेजानेमें संकुचित नहिं होता. और स्त्रियें भी बन्धुबांधवादि शून्य परदेशवासमें कुछ भी कष्ट नहिं समझतीं. परन्तु इसमें कइयक हानियें होने लगीं कि, विदेशमें परिवारको लेजानेसे अनेक महाशय स्वदेशकी ममता व आत्मीयगणोंका स्नेह भूल जाते हैं. और जिनको थोड़ी आमदनी है, उनसे देशमें रहनेवाले वृद्ध माता पितादिकी कुछ भी सहायता करनेमें नहिं आती. दूसरे विदेशमें रोगशोकादि किसी विपत्तिके आनेपर दुःखका पार नहिं रहता. वहां कोई भी सहायक नहिं मिलते. प्रतिवर्ष कमसे कम १ बार अपने देशमें अवश्य ही आना चाहिये और जहांतक बन सके घर रहनेवालोंकी सहायता करनेमें त्रुटि नहिं करनी चाहिये. परदेशमें स्त्रीको लानेसे पहिले कमसे कम १५) रुपये सेविंगब्याङ्कमें जमा कर देना चाहिये.

विचारकर देखा जाय तो विरहकी आवश्यकता भी है. क्योंकि सदैव एकत्र वास करनेसे प्रेमकी मधुरता मालूम नहिं होती. थोड़े दिनके वियोग होनेसे वही निस्तेज प्रेम चतुर्गुण हो जाता है. इसप्रकारके विरहकालमें युवकयुवती अपने २ दोषोंको देख सक्ते हैं. और उन दोषोंके संशोधन करनेका भी संकल्प हो जाता है. परस्परके गुणस्मरण करके परस्पर की प्रीतिमें अधिकतर आकृष्ट होते रहते हैं. परन्तु विरहके समय कुछ सावधानीके साथ रहनेकी स्त्री पुरुष दोनोंको ही अतिशय आवश्यकता है. ऐसे समयमें सर्वथा

आलस्ययुक्त बैठे रहना नहिं चाहिये. किसी न किसी कार्य्यमें लगा रहना ही चाहिये. प्राचीन इतिहास, रामायण (पद्मपुराण) महाभारतादि (पांडव पुराणादि) पढ़कर अथवा समवयस्क सदाचारी स्त्री पुरुषोंके साथ वार्त्तालापादि करके कालव्यतीत करना चाहिये. विरहिणीगणोंको विरहदुःख कम करनेकेलिये सुशीला सखीजनोंसे प्रेमालाप करना चाहिये. इसप्रकार नहिं करनेसे विरहयन्त्रणा दिन २ असह्य हो उठेगी. दूसरे पतिका विरह जबतक रहै, तबतक सुहाग चिह्नोंके अतिरिक्त वस्त्राभूषणोंसे अलंकृत हो नहिं रहना चाहिये. साधारण पोषाक व साधारण गहने रखने चाहिये. विरही युवकगणोंको विदेशमें दुश्चरित्र युवकोंके साथ घनिष्टता नहिं रखनी चाहिये. क्योंकि तुमको पद पदपर अनेक प्रकारके प्रलोभन हैं. अतएव सत्संगतिमें ही रहना चाहिये, सदाचारी विश्वासी मित्रके अतिरिक्त किसीके साथ भी प्रेमके वार्त्तालाप नहिं करने चाहिये.

पत्रव्यवहार करना विरहयन्त्रणा कम हो जानेका प्रधान उपाय है. क्योंकि पत्रव्यवहारमें आधा मिलाप हो जाता है. इसकारण इस बातको स्त्रीपुरुष दोनों ही ध्यानमें रखकर सदैव परस्पर पत्रव्यवहार करते रहना चाहिये.

धर्मानुष्ठान.

(११)

बहुधा देखनेमें आता है कि कोई मनुष्य तो दिनभर परिश्रम करते २ बड़ी कठिनतासे चार आने पैसे भी उत्पन्न करने नहिं पाता. और कोई २ कुछ भी परिश्रम नहिं करते तो भी सैंकड़ों हजारों रुपये उपार्ज्जन करते हैं और किसी २ को तो लाखों रुपयोंकी सम्पत्ति ही नहीं किन्तु राज्य संपदा भी सहजहीमें प्राप्त हो जाती है. ऐसी अवस्थामें प्रायः सर्वसाधारणके मुखसे यही वाक्य निकलता है कि, यह सब भाग्यकी महिमा है. पूर्वजन्ममें इसने कोई महत्पुण्य व धर्मानुष्ठान किया है उसीका यह फल है. और जो परिश्रम करते भी हानिमें और कष्ट उठाते हैं उनको पापी बताते हैं. इत्यादि अनेक प्रत्यक्ष प्रमाणोंसे यह बात सर्वथा माननेमें आती है कि, संसारमें पुण्य पापका फल अवश्य मिलता है. अर्थात् शुभकार्य्योंके (धर्मकार्य्योंके) करनेसे सुखादिककी प्राप्ति होती है और अशुभकार्य्यों (पापकार्य्यों) के करनेसे दुःखकी प्राप्ति होती है. इसकारण दिनरातके २४ घंटोंमेंसे कमसे कम दो घंटे आगामी सुखकेलिये समस्त स्त्री पुरुषोंको

धर्मानुष्ठान भी अवश्य करना चाहिये. जिससे इस लोकमें यशसुखकी प्राप्ति व परलोकमें उत्तमगतिकी प्राप्ति हो.

बहुतसे महाशयोंको ऐसा श्रद्धान है कि, "परलोक किसनें देखा है, जो परलोकमें सुख होगा ही. यह कैसी मूर्खता है कि वर्तमान सुखको छोडकर आगामी सुखकेलिये उपाय किया जाय." सो ऐसा कदापि नहिं समझना चाहिये. धर्म और पापका फल, परलोकमें ही होता है ऐसा नही है. किन्तु इस लोकमें भी प्रत्यक्ष राज्यदंडादि फल देखनेमें आते हैं. और नीतिका वाक्य भी है कि:—

"त्रिभिर्वर्षैस्त्रिभिर्मासैस्त्रिभिः पक्षैस्त्रिभिर्दिनैः ॥
अत्युत्कटैः पापपुण्यैरिहैव फलमश्नुते" ॥ १ ॥

अर्थात् जो कोई अति उत्कट धर्मकार्य्य अथवा पापकार्य्य करता है तो उसका फल तीन दिन, तीन पक्ष, तीन मास अथवा तीन वर्षके भीतर २ इसी जन्ममें ही भोगना पडता है. सो यह बात प्रत्यक्ष देखनेमें आती है. जो तुम कहो कि इस जन्ममें जो फल होगा सो हो जाता है परन्तु परजन्ममें होता है, यह हमारे अनुमानमें नहिं आता. सो उनको किंचित विचार करना चाहिये कि कोई लडका तो धनाढ्यके घर जन्म लेता है और उसको उत्पन्न होनेपर अनेक प्रकारके उत्सव होते हैं. और कोई लडका गरीबके घर पैदा होता है तो उसको माताके दुग्धकी भी प्राप्ति नहिं होती. बलके अनेकोंकी माता जन्मते ही मरजाती हैं. सो यह क्या कारण है कि, कोई २ तो जन्मसे लेकर मरणपर्यंत सुखी होते हैं और किसीको जन्मसे ही मातापितादिके मरजानेसे कष्ट भोगने पडते हैं ? क्या उन्होंनें जन्मते ही पुण्यपाप करलिया था ? कदापि नहीं. यह पूर्वजन्मके पुण्यपापका ही फल है, ऐसा मानना पडेगा इसकारण प्रत्येक दम्पतीको कमसेकम दो घंटे तक पुण्यकार्य्योंद्वारा धर्मोपार्जन अवश्य ही करना चाहिये. हम यह नहिं कहते कि प्राप्तसुखको सर्वथा त्याग करकें सन्यासी हो वनमें जा बैठो; किन्तु जिसप्रकार किसान आगामी वर्षकेलिये बीज रख कर शेषके अन्नको अपने काममें लाता है, इसीप्रकार तुम भी पूर्वपुण्यके उदयसे जो सुखसम्पदाको प्राप्त हुये हो तो सर्वथा न भोगकर आगामी कालकेलिये भी थोडा थोडा पुण्यकार्य्यमें व्यय करकें संचय करते रहो.

अब कोनसा धर्म श्रेष्ठ है और कोनसे धर्मके धारक होना चाहिये. सो इस विषयमें बडा विवाद है. प्रायः सब जने अपने २ पिता पितामहादिक जिस धर्मको सेवन करते आये, उसीको श्रेष्ठ समझ उसीके पक्षपाती होते हैं. सो ऐसा कदापि

नहिं होना चाहिये. तुमको अपनी बुद्धिसे परीक्षा करने पर जोनसा धर्म श्रेष्ठ भासै और जिसकेद्वारा अपना कल्याण होना समझो, उसीको धारण करो. किसीके उपदेशसे अथवा देखादेखी करना सर्वथा अनुचित है. परन्तु धर्मकार्य्योंके करते समय इतना तो अवश्य ही ध्यानमें रखना चाहिये कि, जिस धर्मकार्य्यके करनेमें जंगम जीवोंको किसी प्रकारका कष्ट हो तो वह कार्य्य कदापि नहिं करना चाहिये. क्यों कि, इस समय समस्त मतवालोंका यही एक सिद्धान्त होगया है कि, **"अहिंसा परमो धर्मो हिंसा सर्वत्र गर्हिता"** अर्थात् जीवोंकी रक्षा करना है सो ही परम धर्म है और जिस कार्य्यके करनेमें जीवोंकी हिंसा हो, वही पापकार्य्य है. इसकारण जिस कार्य्यमें जीवोंको क्लेश या दुःख हो वह कार्य्य कदापि नहिं करना चाहिये. और जिन ग्रन्थोंमें हिंसाके बढ़ानेवाले कार्य्योंका प्रतिपादन हो, ऐसे ग्रन्थोंको भी कदापि नहिं पढ़ना चाहिये. और जो ऐसे कार्य्योंके करनेका उपदेश दें, उनका उपदेश भी नहिं सुनना चाहिये.

उपसंहार.

पाठक महाशय! क्या सोचा था और क्या हो गया! विचार तो यह था कि, एक ऐसा पुस्तक लिखूं कि, जिसमें स्त्री पुरुषोंके लिये सांसारिक और पारमार्थिक समस्त प्रकारकी आवश्यकीय शिक्षायें आ जावें. परन्तु प्रारंभमें ही ऐसे ढंगसे कलम चली कि जिससे किसी भी विषयको सविस्तर व भेदप्रभेद करके नहिं लिख सका. लाचार इसको प्रथम भाग करके एक दूसरे भागके लिखनेका मानस किया. और उसमें किन २ आवश्यकीय विषयोंका समावेश किया जाय, इस विषयका विचार करके जब विषयसूची लिखी तो इतने विषय हो गये कि उसके भी दो भाग करने पड़ेंगे. क्योंकि इस दूसरे भागमें सामाजिकसुख, गार्हस्थ्यसुख, शारीरिकसुख, मानसिकसुख और अध्यात्मिकसुख इन पांच सुखोंका वर्णन करना विचारा है. परन्तु इन विषयोंके अन्तरविषय अनेक और विस्तारसे लिखनेकी आवश्यकता होनेपर सामाजिक और गार्हस्थ्यसुखका तो एक भाग और शेषके तीनों सुखोंका एक भाग, इस प्रकार तीन भागोंमें पूरा होनेसे यह पुस्तक बहुत उपयोगी और इसमें आवश्यकीय समस्त विषयोंका समावेश हो सक्ता है. और तब ही हमारे भ्रातृभगिनीगणोंके चित्तको अपनी ओर आकर्षण कर सक्ता है. यहांपर उन दोनों भागोंकी विषयसूची लिख देना भी उचित बोध होता है. क्योंकि–बहुतसे महाशय विषयसूची देखकर भी

पुस्तकके सारासारको जान सक्ते हैं. और किसी आवश्यकीय विषयके बढ़ाने वा अनावश्यकीय विषयके घटानेकी सम्मति भी दे सक्ते हैं. यदि पाठक महाशय विषयसूची देखकर न्यूनाधिक करनेकी अपनी सम्मति देकर कृतार्थ करेंगे तो लिखते समय उनकी सम्मतिका अवश्यमेव सत्कार किया जायगा.

दम्पतिसुखसाधन-द्वितीय-भागकी विषयसूची.

१। सांसारिक-सुख.

समाज किसको कहते हैं और वह किन २ नियमोंसे चलता है, सम्मिलन-शीलता (एकता) से क्या क्या लाभ होते हैं, धन किसको कहते हैं और वह किन २ उपायोंसे संग्रह होता है, धनसंग्रहका प्रथम आधार भूमि है. दूसरा आधार परिश्रम और तीसरा मूलधन है. परिश्रमका लक्षण और भेद, मूलधनका लक्षण और न्हासवृद्धिके कारण, भूमिकी न्हासवृद्धिके कारण, परिश्रमकी न्हासवृद्धिके कारण और परिश्रमको प्रबल करनेके उपाय, मूलधनकी वृद्धिके विस्तृत उपाय, दशजने मिलकर परिश्रम करनेके लाभ, दशजने मिलकर क्रयविक्रय करनेके लाभ, रकडेलपायोनियर्सके दृष्टान्तसे उपर्युक्त दोनों कार्य्योंकी आवश्यकता, सॉनमिल व गर्डनरकृषिप्रभृतिके दृष्टान्त, धनव्याप्ति, सम्पतिरक्षाके उपाय, व्यवसाय व वाणिज्य, सामाजिकसुखस्वच्छंदता होनेके उपाय, स्थानान्तर गमन, सन्तानोत्पादननिवारण, संक्षिप्तविवरण. सभ्यताका फल व सुख, मुद्रायन्त्र, स्टीमएन्जिन, इलेक्ट्रिक्यारिटी, टेलिफोन, फोनोग्राफ और समाजप्रवेश इसप्रकार ये समस्त विषय सामाजिक सुखमें सविस्तर लिखे जांयगे.

२। गार्हस्थ्यसुख.

गार्हस्थ्य, पति और स्त्री, पति और स्त्रीके सम्बन्ध, अंशीसम्बन्ध, सखीसम्बंध, मानसिकविश्राम, आमोदप्रमोद, स्त्री—सम्बंध, सेविकासम्बंध, पूजकसम्बंध, सहधार्मिणीसंबंध, **अंशीसम्बंधीयकर्तव्य**, जिसमें-गृहिणी, मितव्ययिता, भविष्यतकेलिये संचय, अनावश्यकव्यय, आवश्यकीय व्यय, व्यर्थव्यय, नियम व रीति, परिश्रम, विवेकता, व्यवसाय, धैर्य्य, यथासमय कार्य्यसम्पादन, सद्व्यवहार, गृहणीपणा, रन्धनविद्या, सूचिविद्या, रजकविद्या, गृहसज्जा, आवश्यकीयगृहसज्जा, सौन्दर्यगृहसज्जा, साधारणगृहसज्जा, पसन्दता, दृष्टि, सौन्दर्य्यज्ञान, सामान्यद्रव्यसे

गृहसज्जा, प्रयोजनीयद्रव्य संग्रह, पशुपक्षीपालन, कृषि व पुष्पविद्या, गृहके आनुषंगिकविषय, संक्षिप्तविवरण. **सखीसम्बन्धीयकर्तव्य** जिसमें सखी (मैत्रीभाव), कथोपकथन, संगीतवाद्य, खेलना, हास्य कौतुक, आमोदप्रमोद, संक्षिप्तविवरण. **स्त्रीसंबंधीयकर्तव्य** जिसमें स्त्री, सेविका, पूजक ये तीन विषय होंगे. **सहधर्मिणीसम्बंधीयकर्तव्य** जिसमें चिरसंगिनी और गार्हस्थ्यसुखका वर्णन होगा. इस प्रकार इस द्वितीय भागमें दो प्रकारके सुखोंका वर्णन होगा. जिसमेंसे प्रथम सुखमें पुरुषके कर्त्तव्योंकी शिक्षा और दूसरे सुखमें स्त्रीके कर्त्तव्योंकी शिक्षाका मुख्यतया उल्लेख होगा.

दम्पतिसुखसाधन-तृतीय-भागकी विषयसूची.

१। दैहिक-सुख.

मानवदेह, शारीरिकविद्या, रक्त, परिपाक, रक्तोत्पत्तिके उपकरण, शरीररक्षाके उपाय, पंचेन्द्रिय, मन और शरीर, स्वास्थ्यतत्व, वायु, जल, खाद्यपदार्थ, सुमिष्टशब्द, सुगन्ध, उपादेय आहार्य्य, सुकोमलद्रव्य, देहरक्षा, परिश्रम, स्नान, आहार, निद्रा और दैहिकसुख. इस अध्यायमें इसप्रकार विषय लिखे जांयगे.

२। मानसिक-सुख.

मन, प्रीति, प्रीतिकी शाखा, प्रीतिके उपाय, प्रेम, प्रीतिका प्रकाशहोना, दर्शन, कथोपकथन, स्पर्शन, प्रीति व प्रेम, मानसिकराज्य, प्रेमका प्रकाश, प्रेमका समादर, सहानुभूति, और आत्मत्याग, इतने विषय मानसिक सुखमें लिखे जांयगे.

३। आध्यात्मिक-सुख.

आत्मा, अन्तरात्मा, बहिरात्मा, परमात्मा, आकुलता (दुःख), निराकुलता (सुख), कर्मबन्धन, कर्मबन्धनका कारण, मोक्षका उपाय और मोक्ष इत्यादि अनेक विषय इस अध्यायमें लिखे जांयगे.

इसप्रकार इस तृतीयभागको तीन प्रकारके सुखोंमें सविस्तर वर्णन किया जायगा. आशा है कि, पाठक महाशय इन दोनों भागोंकी विषयसूची देखकर अपनी अमूल्य सम्मतिसे कृतार्थ करेंगे. और इन दोनों भागोंके मुद्रित होनेपर इनके कथनानुसार विचारपूर्वक कुछ भी अंश ग्रहण करके मेरेपरिश्रमको सफल करेंगे.

ग्रन्थकर्ता—स्वरूपचन्द्र सेठी.

सम्पादकीय प्रार्थना.

पाठक महाशय ! जिसने यह दम्पतिसुखसाधन प्रथमभाग लिखा था, और उपर्युक्त प्रकारसे दो भागोंके बनानेकी प्रतिज्ञा और उत्साह प्रगट किया था, वह आज इस दुर्लभ्य मनुष्यदेहमें नहीं है, जिसकी अचानक महाशोकदायक मृत्युकी खबर अंक १२ के अन्तमें आप पढ़चुके हैं. यदि होता तो वह अपनी प्रतिज्ञासे भी अधिक कर दिखाता, परन्तु क्या किया जाय इस रंभथंभसम असार संसारमें कोई भी पदार्थ स्थिर नहीं है. एक दिन हमको भी इसीप्रकार अचानक ही चलदेना पड़ेगा. इसकारण जो कुछ बनसके अपने व अपने कुटुंब, जाति, और देशके हितसाधनमें यथाशक्ति तनमनधन व्यय करना ही मनुष्य मात्रका परम कर्त्तव्य है. यद्यपि वह हमारी २५ इच्छावोंको पूर्ण करानेमें प्राणपनसे सहायता देनेको तत्पर व प्रतिज्ञाबद्ध था. बलके मेरे कालवश होनेके पश्चात् भी मेरी समस्त इच्छावोंको पूर्ण करनेकेलिये प्रतिज्ञाबद्ध था. परन्तु खेद है कि आज मुझे ही उसकी इच्छानुसार प्रवृत्ति करनेका समय आगया. अर्थात्–जब वह मेरी इच्छावोंको पूर्ण करनेकेलिये तत्पर था तो अब मेरा भी कर्त्तव्य है कि उसकी इच्छानुसार और नहीं तो दो भाग तो पुरा करदूं. इसकारण अब ये दोनों भाग संक्षेप या विस्तार रूप जैसी मेरी सामर्थ्य है उसके अनुसार मैं ही लिखकर पाठकोंकी दृष्टिगोचर करूंगा. और द्रव्याभावके कारण पुस्तकाकार स्वतंत्र न छपाकर इस जैनहितैषी पत्रके द्वारा ही प्रतिमास एक २ दो दो विषय प्रगट करता रहूंगा.

आपका दास वही

पन्नालाल बा. दि जैन.



प्रार्थना.

सकलगुण आगरी नागरी (हिन्दी) भाषाके रसिक पाठक महाशयोंसे प्रार्थना है कि यदि आप पुस्तकके शुभाशुभ आशयपर दृष्टि न रख केवलमात्र शुद्ध हिन्दी भाषाके ही रसिक हैं. और केवलमात्र वाक्यविन्यासकी सुन्दरताके ही भूखे हैं, तब तो इसपुस्तकको कदापि न पढियेगा. क्योंकि हिन्दी भाषाकी सुन्दरताको मैं बिलकुल नहिं जानता. इसलिये हिन्दी भाषाका सौन्दर्य्य बढानेकेलिये सर्वथा असमर्थ हूं. यदि आप पुस्तकके विषयमें प्रेम रखते हैं तो इसपुस्तकको अवश्य ही पढिये किन्तु जरा ध्यान देकर पढिये.

आपका कृपाकांक्षी.

स्वरूपचन्द्र सेठी

पुस्तक मिलनेका पता—

पन्नालाल जैन मालिक—

जैनहितैषी पुस्तकालय:

पो० गिरगांव मुम्बई.